कार्यालय उपनिदेशक माध्यमिक शिक्षा,अजमेर मण्डल–अजमेर

प्रयास–2017

विषय–विज्ञान

कक्षा–10

माध्यमिक परीक्षा में गुणात्मक एवं मात्रात्मक सुधार हेतु अभिनव कार्ययोजना के तहत निर्मित शैक्षिक सामग्री

कार्यशाला : प्रयास–2017

(दिनांक–23.01.2017)

पाठ्य सामग्री ::–विज्ञान विषय

पाठ संख्या	पाठ का नाम	अंकभार	पेज संख्या
1	रासायनिक अभिकियाएँ एवं समीकरण	5	3–5
2	अम्ल,क्षारक एवं लवण	5	6–7
3	धातु एवं अधातु	5	8–9
4	कार्बन एवं उसके यौगिक	5	10–14
5	तत्वों का आवर्त वर्गीकरण	4	15–16
6	जैव प्रक्रम	7	17–22
7	नियन्त्रण एवं समन्वय	5	23–28
8	जीव जनन कैसे करते है	4	29–33
9	आनुवंशिकता एवं जैव विकास	4	34–37
10	प्रकाश–परावर्तन तथा अपवर्तन	6	38–44
11	मानव नैत्र तथा रंगबिरंगा संसार	4	45–49
12	विद्युत	7	50–54
13	विद्युत धारा के चुम्बकीय प्रभाव	7	55–58
14	ऊर्जा के स्त्रोत	2	59–63
15	हमारा पर्यावरण	2	64–65
16	प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन	4	66–67
	सड़क सुरक्षा	4	68–71

अध्याय–1

पाठ–1 रासायनिक अभिक्रियाएं एवं समीकरण

परमाणु क्रमांक 1 से 20 तक के तत्वों के नाम, प्रतीक तथा कुछ चुनिंदा तत्वों की परमाणु सयोंजकता एवं परमाणु भार

परमाणु क्रमांक	परमाणु का नाम	याद करने का तरीका	प्रतीक	परमाणु सयोंजकता	परमाणु भार
1	हाइड्रोजन	Hi	H	+1, –1	1
2	हीलियम	Hello	He	0	4
3	लीथियम	Listen	Li	+1	
4	बेरीलियम	B	Be		
5	बोरोन	B	B		
6	कार्बन	C	C		12
7	नाइट्रोजन	News	N	–3	14
8	ऑक्सीजन	On	O	–2	16
9	फ्लुऑरीन	Friday	F	–1	19
10	नियॉन	Night	Ne	0	20
11	सोडियम	ना	Na	+1	23
12	मैग्नीशियम	माँगो	Mg	+2	24
13	एलुमिनियम	अल्लाह	Al	+3	
14	सिलिकन	से	Si		
15	फॉस्फोरस	पेप्सी	P	–3	
16	सल्फर	सोडा	S	–2	32
17	क्लोरीन	कोला	Cl	–1	35.5
18	ऑर्गन	और	Ar	0	
19	पोटैशियम	काजू	K	+1	39
20	कैल्शियम	कतली	Ca	+2	40

<u>याद रखने का तरीका</u>

Hi	He	Le	Be	B	C	N	O	F	Ne
हाय	हैल्लो	लिसन	बी	बी	सी	न्यूज	ऑन	फ़ाईडे	नाइट

Na	Mg	Al	Si	P	S	Cl	Ar	K	Ca
ना	मांगो	अल्हा	से	पेप्सी	सोडा	कोला	और	काजू	कतली

रासायनिक अभिक्रियाएँ :– आठ प्रकार की होती है

(1) संयोजन अभिक्रिया
(2) वियोजन अभिक्रिया
(3) उष्माक्षेपी अभिक्रिया
(4) ऊष्माशोषी अभिक्रिया
(5) विस्थापन अभिक्रिया
(6) द्विविस्थापन अभिक्रिया
(7) रेडॉक्स अभिक्रिया
(8) अवक्षेपण अभिक्रिया

- **रासायनिक अभिक्रिया:–** दो या दो से अधिक रसायन मिलकर यदि कोई नया रसायन बनाए तो उसे रासायनिक अभिक्रिया कहते है।

(1) संयोजन अभिक्रिया :– इस अभिक्रिया में दो या अधिक क्रियाकारक जुड़कर एक उत्पाद बनता है।

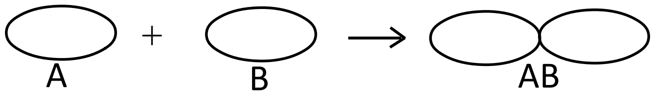

उदाहरण:– $N_{2(g)} + O_{2(g)} \longrightarrow 2NO_{(g)}$
नाइट्रोजन आक्सीजन नाइट्रिक ऑक्साइड

(2) वियोजन अभिक्रिया :– इस अभिक्रिया में एक क्रियाकारक टूट कर दो या अधिक उत्पाद बनता है।

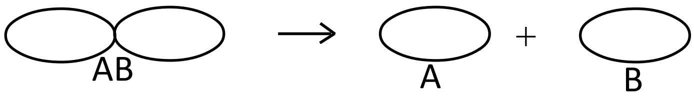

उदाहरण:– $2NO_{(g)} \longrightarrow N_{2(g)} + O_{2(g)}$
नाइट्रिक ऑक्साइड नाइट्रोजन ऑक्सीजन

वियोजन अभिक्रिया तीन प्रकार की होती हैं :–

i. **ऊष्मीय वियोजन:–** ऊष्मा के द्वारा वियोजन होता हैं।

उदाहरण:– $CaCO_{3(s)} \xrightarrow{\text{उष्मा}} CaO_{(s)} + CO_{2(g)}$
केल्शियम कार्बोनेट केल्शियम ऑक्साइड कार्बन डाई ऑक्साइड

ii. **विद्युतीय वियोजन** :– विद्युत धारा के द्वारा वियोजन

उदाहरण:– $2H_2O \xrightarrow{\text{विद्युत धारा}} H_{2(g)} + O_{2(g)}$
जल हाइड्रोजन ऑक्सीजन

iii. **प्रकाशीय वियोजन** :– सूर्य के प्रकाश द्वारा वियोजन

उदाहरण:– $2AgBr_{(s)} \xrightarrow{\text{सूर्य का प्रकाश}} 2Ag_{(s)} + Br_{2(g)}$
सिल्वर ब्रोमाइड सिल्वर ब्रोमीन गैस

(3) ऊष्माक्षेपी अभिक्रिया :– इस अभिक्रिया में उत्पाद बनने के साथ ऊष्मा का उत्सर्जन होता है। (पात्र गरम हो जाता है)

उदाहरण:– $CH_{4(g)} + 2O_{2(g)} \longrightarrow CO_{2(g)} + 2H_2O + \text{Heat}$
मेथेन ऑक्सीजन कार्बन डाई ऑक्साइड पानी ऊष्मा

(4) ऊष्माशोषी अभिक्रिया :— इस अभिक्रिया में ऊष्मा का अवशोषण होता है।
(पात्र ठण्डा हो जाता है)

उदाहरणः— $NH_4Cl_{(s)} + H_2O_{(l)} \longrightarrow NH_4Cl_{(aq)}$ - Heat
ऊष्मा

(5) विस्थापन अभिक्रिया :— इस अभिक्रिया में एक अधिक क्रियाशील तत्व, दूसरे कम क्रियाशीलतत्व को उसके विलयन में से विस्थापित कर देता है।

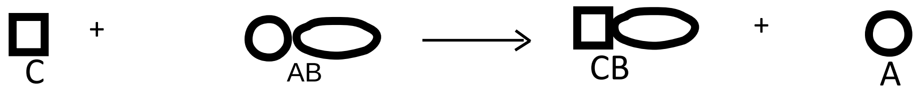

उदाहरणः— $Fe_{(s)} + CuSO_{4(s)} \longrightarrow FeSO_{4(s)} + Cu_{(s)}$
आयरन केल्शियम ऑक्साइड फेरस ऑक्साईड कॉपर

(6) द्विविस्थापन अभिक्रिया :— इस अभिक्रिया में दो यौगिकों के बीच में आयनों का आदान—प्रदान होता है।

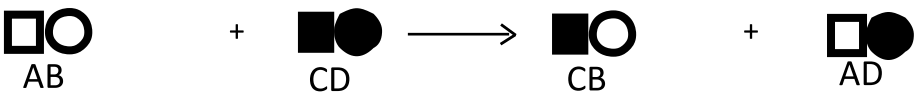

उदाहरणः— $Na_2SO_{4(aq)} + BaCl_{2(aq)} \longrightarrow BaSO_{4(s)} + 2NaCl_{(aq)}$
सोडियम सल्फेट बेरियम क्लोराइड बेरियम सल्फेट सोडियम क्लोराईड

(7) रेडॉक्स अभिक्रिया / उपचयन—अपचयन अभिक्रिया :— इस अभिक्रिया में एक अभिकारक का आक्सीकरण तथा दूसरे अभिकारक का अपचयन होता है।

उदाहरणः— $ZnO + C \longrightarrow Zn + CO$

इस अभिक्रिया में ZnO का Zn में अपचयन तथा C का CO में ऑक्सीकरण हो रहा है।

(8) अवक्षेपण अभिक्रिया :— वह रासायनिक अभिक्रिया जिसमे अभिक्रिया के दौरान अवक्षेप बनता हैं, उसे अवक्षेपण अभिक्रिया कहते हैं जैसे

उदाहरणः— $Pb(NO_3)_{2(aq)} + 2KI_{(aq)} \longrightarrow PbI_{2(s)}\downarrow + 2KNO_{3(aq)}$
लेड नाइट्रेट पोटेशियम आयोडइड लेड आयोडाइड पोशियम नाइट्रेट

- **संक्षारण :—** जब कोई धातु अपने आस—पास अम्ल, आर्द्रता / नमी के सम्पर्क में आती है तो उस पर जंग लग जाता हैं, इस क्रिया को संक्षारण (जंग) कहते हैं।

उदाहरण :— 1. लोहे के ऊपर भूरी परत चढ़ना।
2. चांदी के ऊपर काली परत चढ़ना।
3 ताम्बे के ऊपर हरी परत चढ़ना।

संक्षारण से बचने के उपाय :—
1. धातु पर ऑयल पेन्ट करना।
2. धातु पर रेड ऑक्साइड का लेप करना।
3. धातु पर यशद लेपन करना।

- **विकृतगंधिता** :— तेल एवं वसा युक्त खाद्य सामग्री वायुमण्डल की ऑक्सीजन से क्रिया करके उपचयित (ऑक्सीकृत) हो जाती है। जिससे खाद्य सामग्री विकृतगंधित(खराब) हो जाती है और उसका स्वाद एवं गंध बदल जाते है, इसे विकृतगंधिता कहते हैं।

विकृतगंधिता से बचाव के उपाय :—
1. विकृतगंधिता को कम करने के लिए खाद्य सामग्रियों में उपचयन रोकने वाले पदार्थ (प्रति ऑक्सीकारक) मिलाते हैं।
2. खाद्य सामग्रियों को वायुरोधी बर्तनों में रखते हैं।

उदाहरण :— आलू के चिप्स की थैली में से ऑक्सीजन को निकाल कर कम सक्रिय गैस नाइट्रोजन भर देते हैं, जिससे की चिप्स का ऑक्सीकरण न हो सकें तथा चिप्स खराब न हो।

अध्याय–2
अम्ल, क्षारक एवं लवण

- **अम्ल :–**
  1. स्वाद में खट्टे होते हैं।
  2. नीले लिटमस पत्र को लाल करते हैं।(अनिल)
  3. विद्युत के चालक होते हैं।
  4. जल में H^+ आयन देते हैं।

उदाहरण :– सिरका, दही, HCl, H_2SO_4, इमली

- **क्षारक :–**
  1. स्वाद में कड़वे होते हैं।
  2. लाल लिटमस पत्र को नीला करते हैं।(क्षालानी)
  3. विद्युत के चालक होते हैं।
  4. जल में OH^- आयन देते हैं।

उदाहरण :– साबुन, KOH, NaOH

- **लवण :–**
  1. स्वाद में नमकीन होते हैं।
  2. लिटमस पत्र का रंग नहीं बदलते हैं।
  3. विद्युत के चालक होते हैं।
  4. जल में अम्ल व क्षार देते हैं।

उदाहरण :– Na_2CO_3, NaCl

- **लिटमस पत्र :–** लाइकेन (थैलोफायटा) से प्राप्त किया जाता हैं। यह एक सूचक है जिसके रंग परिवर्तन द्वारा ये हमें बताते हैं कि कोई पदार्थ अम्ल हैं या क्षारक
- अम्ल व क्षारक के रासायनिक गुणधर्म :–

ये धातुओं से क्रिया कर हाइडोजन गैस देते हैं। जैसे

$2HCl + Zn \rightarrow ZnCl_2 + H_2\uparrow$

$2NaOH + Zn \rightarrow Na_2ZnO_2 + H_2\uparrow$

कार्बोनेट व बाईकार्बोनेट के साथ क्रिया कर कार्बनडाईऑक्साइड देते हैं।

$Na_2CO_3 + 2HCl \rightarrow 2NaCl + H_2O + CO_2\uparrow$

$NaHCO_3 + HCl \rightarrow NaCl + H_2O + CO_2\uparrow$

उत्पन्न CO_2 को चूने के पानी में प्रवाहित करने पर चूने का पानी दूधिया हो जाता है।

$Ca(OH)_2 + CO_2 \rightarrow CaCO_3\downarrow + H_2O$

अत्यधिक मात्रा में CO_2 प्रवाहित करने पर चूने का पानी पुनः रंगहीन हो जाता है। :–

$CaCO_3 + H_2O + CO_2 \rightarrow Ca(HCO_3)_2$

- **उदासीनीकरण अभिक्रिया :–** अम्ल एवं क्षार आपस में क्रिया कर एक दूसरें के प्रभाव को नष्ट कर लवण व जल बनाते हैं।

$HCl + NaOH \rightarrow NaCl + H_2O$

अम्लों के साथ धात्विक ऑक्साइडों की अभिक्रियायें :–

$ZnO + 2HCl \rightarrow ZnCl_2 + H_2O$

क्षारों के साथ धात्विक ऑक्साइडों की अभिक्रिया :–

$Ca(OH)2 + CO_2 \rightarrow CaCO_3 + H_2O$

उपर्युक्त इन दोनों अभिकथन से यह निष्कर्ष निकलता हैं कि धात्विक ऑक्साइड की प्रकृति क्षारीय व अधात्विक ऑक्साइडों की प्रकृति अम्लीय होती है।

- **अम्ल व क्षारकों में समानताएं :—** अम्ल एवं क्षार दोनों ही जलीय विलयन में आयन प्रदान करते हैं व विद्युत का चालन करते हैं। अम्ल H^+ आयन व क्षार OH^- आयन देते हैं।

नोट :— शुष्क HCl लिटमस पत्र के रंग को नहीं बदलती है क्योंकि इस समय दोनों शुष्क होने के कारण दोनों के बीच क्रिया होने के लिए माध्यम नहीं मिलता है।

ग्लुकोज व एल्कोहॉल जैसे यौगिक में H^+ होते हुये भी यह जलीय विलयन में अम्लीय गुण प्रदर्शित नहीं करते हैं। जल में अम्ल/क्षार मिलाने के प्रक्रम को **तनुकरण** कहते हैं। इस प्रक्रम में (H^+ /OH^-) में प्रति इकाई आयतन में कमी हो जाती है।

- **pH स्केल** :— किसी विलयन में उपस्थित H^+ आयन की सांद्रता ज्ञात करने के लिये स्केल विकसित किया गया है। यहाँ p — पुसांस (शक्ति), H — हाइड्रोजन आयन सांद्रता

pH स्केल में 0—14 तक ज्ञात कर सकते हैं। 0>7 **pH** (अम्लीय), 7 **pH** (उदासीन), 7>14 **pH** (क्षारीय),

प्रबल अम्लः— अधिक आयन H^+ उत्पन्न करनें वाले (HCl, HNO_3, H_2SO_4)
दुर्बल क्षार :— अधिक आयन OH^- उत्पन्न करनें वाले ($NaOH$, KOH)
प्रबल अम्ल + प्रबल क्षार → उदासीन लवण ($NaCl$) pH =7
प्रबल अम्ल + दुर्बल क्षार → अम्लीय लवण ($CuSO_4$) pH 0<7
दुर्बल अम्ल + प्रबल क्षार → क्षारीय लवण (CH_3COOH) pH 7>14

दैनिक जीवन में pH का महत्व :—

1. हमारे पेट में जब HCl अधिक हो जाता है तो इसे अति अम्लता कहते हैं। इसे दूर करने के लिए Milk of Magnesia या ENO का प्रयोग करते हैं। इनमें क्षार होता है। जो अम्लता को कम कर देता है।
2. मुंह के अन्दर का pH जब 5.5 से कम हो तो दंत क्षय होना प्रारम्भ हो जाता हैं। क्षय में दांतों का इनेमल जो कि $Ca_3(PO_4)_2$ का बना होता हैं इसका संक्षारण प्रारम्भ हो जाता हैं। इससे बचने के लिए भोजन करने के बाद पानी से कुल्ला करना चाहिये।
3. मधुमक्खी के डंक, लाल चीटीं में मैथेनोइक अम्ल होता हैं। जिसके कारण जलन होती हैं। डंक मारे हुए स्थान पर बैकिंग सोडा लगाने से आराम मिलता हैं।
4. अत्यधिक अम्लभ्य मृदा की pH को बढ़ाने के लिये उसमें चाक, CaO या $Ca(OH)_2$ मिलाया जाता हैं।

- क्लोर—क्षार अभिक्रिया :— NaCl के जलीय विलयन से विद्युत प्रवाहित करने पर यह वियोजित होकर NaOH उत्पन्न करता हैं। इस प्रक्रिया में निर्मित उत्पाद Cl_2 व NaOH होने के कारण इसे क्लोर—क्षार अभिक्रिया कहते हैं।

क्लोर क्षार अभिक्रिया से बनने वाले महत्वपूर्ण उत्पाद :— HCl, विरंजक चूर्ण।

{1} विरंजक चूर्ण ($CaOCl_2$) :— $Ca(OH)_2 + Cl_2 \rightarrow CaOCl_2 + H_2O$

उपयोग :— वस्त्र विरंजन में, उद्योग में उपचायक के रूप में, जल को जीवाणुओं से मुक्त करने में।

{2} बैकिंग सोडा ($NaHCO_3$):— $NaCl + H_2O + CO_2 + NH_3 \rightarrow NaHCO_3 + NH_4Cl$

उपयोग :— 1. CO_2 बनने के कारण बेकिंग सोडा का उपयोग पावरोटी, केक खस्ता पकौड़े बनाने में किया जाता हैं। 2. प्रतिअम्ल(Antacid) व अग्निशामक यन्त्र में किया जाता है।

{3} धोने का सोडा ($Na_2CO_3.10H_2O$):— $Na_2CO_3 + 10H_2O \rightarrow Na_2CO_3.10H_2O$

उपयोग :— 1. साबुन व काँच उद्योगों में।
2. जल की स्थायी कठोरता हटाने में।

{4} प्लास्टर ऑफ पेरिस (CaSO4.½H2O) :— $CaSO_4.2H_2O \rightarrow CaSO_4.\frac{1}{2}H_2O + 1\frac{1}{2}H_2O$

POP को नमी रहित बर्तन में रखा जाता हैं क्योंकि यह नमी से क्रिया कर कठोर पदार्थ जिप्सम बना लेता हैं।

उपयोग :— प्लास्टर चढ़ाने में, खिलौने व सजावटी सामान बनाने में।

अध्याय–3

धातु एवं अधातु

मुख्य बिन्दुः–

1. तत्व तीन प्रकार के होते है – धातु, अधातु तथा उप धातु।
2. धातुएँ– तन्य, आघातवर्धनीय, चमकीली एवं उष्मा तथा विद्युत की सुचालक होती हैं तथा धातुएँ ध्वानिक (सोनोरस) होती हैं।
3. पारद (मर्करी) के अलावा सभी धातुएँ कमरे के ताप पर ठोस अवस्था में होती है लेकिन पारद कमरें के ताप पर द्रव होता है।
4. धातुएँ सामान्यतः कठोर होती हैं, लेकिन सोडियम पौटेशियम आदि धातुएँ मुलायम होती हैं। इन्हें चाकू से काटा जा सकता है।
5. आघातवर्धनीयता – घातुओं को पीटकर पतली चादर के रूप में परिवर्तन किया जा सकता हैं। इस गुण धर्म को आघातवर्धनीयता कहते हैं। सोना तथा चॉदी सबसे अधिक आघातवर्ध्य धातुएँ हैं।
6. तन्यता – धातुओं को पतले तार के रूप में खींचने की क्षमता को तन्यता कहते है। सोना (Au) सबसे अधिक तन्य धातु हैं। एक ग्राम सोना से 2 किलोमीटर लम्बा तार बनाया जा सकता है।
7, सिल्वर तथा कॉपर उष्मा के सबसे अच्छे चालक हैं। जबकि लेड तथा मर्करी उष्मा के कुचालक है।
8. धातुएँ विद्युत धनात्मक तत्व होते हैं, क्योंकि अधातुओं को इलक्टªेान देकर स्वयं को धनात्मक बनाती हैं।
9. अधातुओं के गुण धातुओं के विपरीत होते हैं। ये न तों आघातवर्तनीय होती हैं, और न ही तन्य।
10. ग्रेफाइट के अलावा सभी अधातुएँ उष्मा एवं विद्युत की कुचालक होती है। ग्रेफाइट में मुक्त इलेक्ट्रॉन (Free electron) होने से विधुत का सुचालक होता हैं।
11. अधातुएं विधुत ऋणात्मक तत्व होती है क्योंकि ये धातुओं के साथ अभिक्रिया में इलेक्ट्रॉन ग्रहण करके ऋणायन बनाती हैं।
12. धातुओं की तुलना में अधातुओं की संख्या कम होती है।
13. अधातुएँ सामान्यतः ठोस या गैस होती है। जबकि Br, ब्रोमीन ऐसी अधातु हैं जो द्रव होती है।
14. धातुओं के गलनांक एवं क्वथनांक उच्च होते है लेकिन गैलियम तथा Cs सीजियम के गलनांक बहुत कम होते हैं।
15. आयोडीन अधातु होते हुए भी चमकीला होता हैं।
16. अपररुप   – एक ही तत्व के भिन्न–2 रूप, जिनके गुणों में भिन्नता होती है, उन्हे अपररुप कहते है।
17. धातुएi आक्सीजन से क्रिया करके ऑक्साइड बनाती है। जो कि क्षारकीय होती हैं परन्तु जिंक ऑक्साइड जैसे कुछ धातु ऑक्साइड उभयधर्मी होते हें। अर्थात इनमें क्षारीय एवं अम्लीय दोनो गुणधर्म होते हैं।
18. अधातुओं के ऑक्साइड अम्लीय या उदासीन होते हैं।
19. सामान्य ताप पर Mn,Al, Zn तथा Pb आदि जैसी धातुओं की सतह पर ऑक्साइड की पतली परत चढ जाती है। आक्साइड की यह परत धातुओं को पुनः ऑक्सीकरण से सुरक्षित रखती हैं।
20. जल एवं तनु अम्लों के साथ विभिन्न धातुओं की क्रियाशीलता भिन्न–2 होती हैं।
21. सक्रियता श्रेणी में हाइड्रोजन के ऊपर स्थित धातुएँ तनु अम्ल से हाइड्रोजन को विस्थापित करती हैं।
22. अधातुएं तनु अम्लो में से H_2 हाइडªोजन का विस्थापन नहीं करती हैं ये हाइड्रोजन संक्रिया कर हाइडªाइड बनाती हैं।
23. अधिक क्रियाशील धातुएँ अपने से कम क्रियाशील धातुओं को उसके लवण में विलयन संविस्थापित कर सकती हैं।
24. जब धातुएँ नाइटिªक अम्ल (HNO_3) के साथ अभिक्रिया करती हैं। तब H_2 गैस उत्सर्जित नहीं होती है। क्योंकि HNO_3 एक प्रबल आक्सीकारक होता हैं। जो उत्पन्न H_2 गैस को आक्सीकृत करके जल बना देता हैं। तथा स्वयं नाइटªेाजन के किसी ऑक्साइड में अपभ्रमित हो जाता है।
25. अधिक क्रियाशील धातुएँ अपने से कम क्रियाशील धातुओं को उसके लवण के विलयन से विस्थापित कर सकती हैं।
26. सक्रियता श्रेणी – जब धातुओं को क्रियाशीलता के अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है तो प्राप्त सूची को सक्रियता श्रेणी कहते है।

27. धातु तथा अधातु आपस में क्रिया करके आयनिक यौगिक बनाती है। जैसे NaCl

$$Na^{+} + Cl^{-} \rightarrow NaCl$$

28. आयनिक यौगिक ठोस, कठोर तथा भंगुर होते हें। इनका गलनांक एवं क्वथनांक उच्च होता हैं।
29. आयनिक यौगिक जल में घुलनशील लेकिन केरोसीन, पेट्रोल आदि विलायको में अविलेय होते है।
30. आयनिक यौगिक गलित अवस्था तथा विलयन की अवस्था में विद्युत का चालन करते है।
31. प्रकृति में धातुएँ स्वतन्त्र अवस्था में या यौगिकों के रूप में पाई जाती है। स्वतन्त्र अवस्था में सोना सिल्वर , प्लेटिनम एवं तांबा तथा संयुक्त अवस्था में Cu एवं सिल्वर अयस्क के रूप में मिलती है।
32. खनिज – पृथ्वी की भूपर्पटी में प्राकृतिक रूप में पाए जाने वाले तत्वों या यौगिकों को खनिज कहते है।
33. अयस्क – (Ore)वे खनिज जिनसे धातु का निकालना आसान तथा आर्थिक रूप से लाभकारी होता है उन्हें अयस्क कहते है।
34. धातुकर्म – अयस्क से धातु का निष्कर्षण तथा उसका परिष्करण कर उपयोगी बनाने के प्रक्रम को धातुकर्म कहते है।
35. सोना, चॉदी, प्लेटिनम तथा कॉपर स्वतन्त्र अवस्था में पाए जाते है।
36. अयस्क का सान्द्रण – अयस्क से मिट्टी, रेत आदि (गैंग) को हटाना अयस्क का सान्द्रण कहलाता है।
37. **निस्तापन –** कार्बोनेट, जलयोजित ऑक्साइडों अम्लो को सीमित वायु में गर्म करने पर ये ऑक्साइडों में परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रक्रियाको निस्तापन कहते है। निस्तापन में कार्बनडाईआक्साइड गैस का उतर्जन होता है।
38. **भर्जन (Rosting)**–सल्फाइड अयस्क को वायु की उपस्थिति में अधिक ताप पर गर्म करने पर यह ऑक्साइड में बदल जाता हैं। इस प्रक्रियाको भर्जन कहते है। भर्जन में सल्फर डाई आक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है
39. धातुओं में परिष्करण की सबसे अधिक प्रचलित विधि **विद्युत अपघटनीय** परिष्करण विधि है।
40. **मिश्रधातु –** दो यो दो से अधिक धातुओं अथवा एक धातु या एक अधातु के समांगी मिश्रण को मिश्रधातु कहते है।
41 **संक्षारण** – लम्बे समय तक आर्द्र वायु के सम्पर्क मे रखने से लोहा जैसे कुछ धातुओ की सतह संक्षारित हो जाती है इस प्रक्रियाको संक्षारण कहते है।
42. लोहे एंव इस्पात को जंग से सुरक्षित रखने के लिए उन पर जस्ते की पतली परत चढाने की विधि को यशद लेपन कहते है।
43. **अमलगम –** यदि कोई एक धातु पारद है तो इसके मिश्र धातु को अमलगम कहते है।
44. लम्बे समय तक आद्र वायु मे रहने पर लोहे पर भुरे रंग के पत्र की पदार्थ की चढ जाती है। जिस जंग कहते है।

का	K	**पोटैशियम**
ना	Na	**सोडियम**
कार	Ca	**कैल्शियम**
माँगे	Mg	**मैग्नीशियम**
एल्टो	Al	**एलुमिनियम**
जेन	Zn	**जिंक**
फरारी	Fe	**आयरन**
प्रभू	Pb	**लेड**
हे	H	**हाइड्रोजन**
क्यूं	Cu	**कॉपर**
हजुर	Hg	**मर्करी**
आज	Ag	**चाँदी**
आओ	Au	**सोना**

घटती क्रियाशीलता

अध्याय–4
कार्बन एवं उसके अपररूप

कार्बन :– प्रतीक (C) , परमाणु क्रमांक – 6, इलेक्ट्रॉनिक विन्यास :– 2,4

सयोंजी इलेक्ट्रॉनों की संख्या :– 4

आबंध की प्रकृति :– सहसंयोजी आबंध

सहसंयोजी आबंध :– दो परमाणुओं के मध्य इलेक्ट्रॉनों की साझेदारी से बनने वाले आबंध को सहसंयोजी आबंध कहते हैं।

1. एकल बंध :– दो परमाणुओं के मध्य एक–एक इलेक्ट्रॉन के साझे से एकल बन्ध बनता हैं।
   जैसे H_2, Cl_2, F_2, Br_2, CH_4
2. द्विबंध :– दो परमाणुओं के मध्य दो–दो इलेक्ट्रोनों के साझे से द्विबंध बनता हैं। जैसे O_2, S_2, C_2H_4
3. त्रिबंध :– दो परमाणुओं के मध्य तीन–तीन इलेक्ट्रोनों के साझे से त्रिबंध बनता हैं। जैसे N_2, C_2H_2

सहसंयोजी यौगिकों के गुण :–

1. इन यौगिकों के अणुओं के परमाणुओं के मध्य प्रबल आकर्षण होता हैं परन्तु अणुओं के मध्य दुर्बल आकर्षण होता हैं अर्थात् अन्तः अणुक बल अधिक तथा अन्तराणुक बल कम होता हैं।
2. इन यौगिकों के गलनांक व क्वथनांक कम होते हैं। ये यौगिक विद्युत के कुचालक होते हैं। इन यौगिकों में आयन नहीं बनते हैं।

सहसंयोजी यौगिकों की इलेक्ट्रॉन बिन्दु संरचना :–

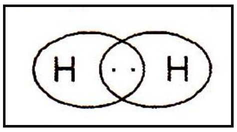

H_2

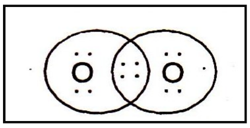

O_2

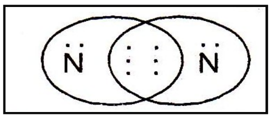

N_2

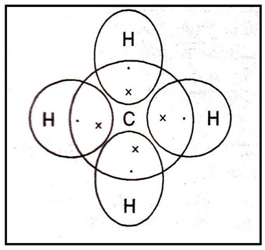

CH_4

कार्बन के अपररूप :–

अपररूप :– किसी तत्व के वे अलग–अलग रूप जिनके भौतिक गुण भिन्न–भिन्न होते हैं जबकि रासायनिक गुण समान होते हैं, अपररूप कहलाते हैं।

कार्बन के तीन अपररूप होते हैं :–

1. हीरा

- हीरे में प्रत्येक कार्बन परमाणु चार अन्य कार्बन परमाणुओं के साथ सहसंयोजी आबंध से जुड़ा होता हैं।
- हीरे में कार्बन परमाणु त्रिआयामी रूप में जुड़ कर जालरूपी दृढ़ संरचना बनाते हैं। इसी कारण हीरा अत्याधिक कठोर होता हैं।
- इस त्रिविमीय संरचना में कोई मुक्त इलेक्ट्रोन नहीं होता हैं अतः हीरा विद्युत का कुचालक होता हैं।

2. ग्रेफाइट

- ग्रेफाइट में प्रत्येक कार्बन परमाणु तीन अन्य कार्बन परमाणुओं के साथ सहसंयोजी आबंध द्वारा षट्कोणीय रूप में जुड़ कर तलीय या परतीय संरचना बनाते हैं।
- ये परतें दुर्बल आकर्षण बल द्वारा जुड़ी होती हैं। जो कि बल लगाने से एक दूसरे पर फिसल जाती हैं। अतः ग्रेफाइट मुलायम होता हैं।

- ग्रेफाइट की संरचना में प्रत्येक कार्बन परमाणु के पास एक मुक्त इलेक्ट्रोन होता हैं। अतः ग्रेफाइट विद्युत का सुचालक होता हैं।

3. फुलरीन

- फुलरीन में प्रत्येक कार्बन परमाणु तीन अन्य कार्बन परमाणु द्वारा सहसंयोजी बंध द्वारा पंचकोणीय रूप में जुड़कर गुबंदाकार (फुटबाल जैसी) संरचना बना लेते हैं। उदाहरण : C – 60

कार्बन की सर्वत्तोमुखी प्रकृति :–

कार्बन की सर्वतोमुखी प्रकृति होती हैं अर्थात् कार्बन बड़ी संख्या में यौगिक बनाता हैं। इसके निम्न कारण हैं :–

1. **श्रृंखलन :–** कार्बन में कार्बन के ही अन्य कार्बन परमाणुओं के साथ सहसंयोजी आबंध बनाने की अद्वितीय क्षमता होती हैं। जिससे यह लम्बी–लम्बी श्रृंखला वाले असंख्य अणु बनते हैं।इस अणु को श्रृंखलन कहते हैं।
   - श्रृंखलन के गुण के कारण कार्बन लम्बी श्रृंखला युक्त, शाखित श्रृंखला युक्त तथा वलय श्रृंखला युक्त यौगिक बना सकते हैं।
2. **चतु: संयोजकता :–**
   - कार्बन की संयोजकता चार होती हैं। इस कारण यह एकल बंध द्वारा चार अन्य कार्बन परमाणु से या चार एकल संयोजी परमाणुओं से जुड़ सकता हैं।
   - इस गुण के कारण यह कार्बन के अतिरिक्त H, O, S, N, Cl तथा अन्य तत्वों के साथ भी यौगिक बना सकते हैं।

- संतृप्त कार्बन यौगिक :– ऐसे कार्बन यौगिक जिनमें कार्बन परमाणुओं के मध्य केवल एकल सहसंयोजी बंध पाया जाता हैं। संतृप्त कार्बन यौगिक कहलाते हैं। उदाहरण :– ऐथेन, प्रोपेन, ब्युटेन आदि।
- असंतृप्त कार्बन यौगिक :– ऐसे कार्बन यौगिक जिनमें कार्बन परमाणुओं के मध्य द्विबंध या त्रिबंध पाया जाता हैं। असंतृप्त कार्बन यौगिक कहलाते हैं। उदाहरण :– एथीन, स्थाइन, प्रोपाइन आदि।
- वलय युक्त कार्बन यौगिकों के कुछ उदाहरण व संरचना :–

साइक्लोहेक्सेन

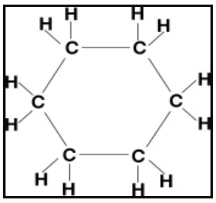

बेंजीन

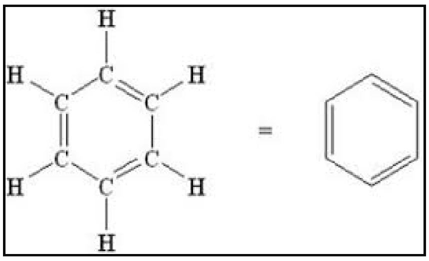

- संरचनात्मक समावयवी :– ऐसे यौगिक जिनके आण्विक सूत्र तो समान होते हैं परन्तु संरचना अलग–अलग होती हैं संरचनात्मक समावयवी कहलाते हैं।

उदाहरण :– 1. ब्यूटेन :– दो समावयवी होते हैं ;

(I) $H_3C\text{-}CH_2\text{-}CH_2\text{-}CH_3$ नार्मल ब्यूटेन

(II) $H_3C\text{-}CH(CH_3)\text{-}CH_3$ आइसो ब्यूटेन

2- पेन्टेन :– तीन समावयवी होते हैं।;

(I) $H_3C\text{-}CH_2\text{-}CH_2\text{-}CH_2\text{-}CH_3$ नार्मल पेंटेन

(II) $H_3C\text{-}CH(CH_3)\text{-}CH_2\text{-}CH_3$ आइसो पेंटेन

(III) $H_3C\text{-}C(CH_3)_2\text{-}CH_3$ नियो पेंटेन

- समजातीय श्रेणी :– कार्बन यौगिक की ऐसी श्रेणी जिसमें कार्बन श्रृंखला में स्थित हाइड्रोजन को एक ही प्रकार के प्रकार्यात्मक समूह द्वारा प्रति स्थापित किया जाता हैं, उसे समजातीय श्रेणी कहते हैं।

उदाहरण :– 1. एल्केन :– सामान्य सूत्र C_nH_{2n+2}

2. एल्कीन :– सामान्य सूत्र C_nH_{2n}

3 एल्काइन :– सामान्य सूत्र C_nH_{2n-2}

1. एल्केन श्रेणी के सदस्य :– मेथेन (CH_4), एथेन(C_2H_6), प्रोपेन(C_3H_8), ब्युटेन(C_4H_{10}), पेंटेन(C_5H_{12}), हेक्सेन(C_6H_{14}), हेप्टेन(C_7H_{16}), ऑक्टेन(C_8H_{18}), नॉनेन(C_9H_{20}), डेकेन($C_{10}H_{22}$)।
2. एल्कीन श्रेणी के सदस्य :– एथीन(C_2H_4), प्रोपीन(C_3H_6), ब्युटीन(C_4H_8), पेंटीन(C_5H_{10}), हेक्सीन(C_6H_{12}), हेप्टीन(C_7H_{14}), ऑक्टीन(C_8H_{16}), नॉनीन(C_9H_{18}), डेकीन($C_{10}H_{20}$)।
3. एल्काइन श्रेणी के सदस्य :– एथाइन(C_2H_2), प्रोपाइन(C_3H_4), ब्युटाइन(C_4H_6), पेंटाइन(C_5H_8), हेक्साइन(C_6H_{10}), हेप्टाइन(C_7H_{12}), ऑक्टाइन(C_8H_{14}), नॉनाइन(C_9H_{16}), डेकाइन($C_{10}H_{18}$)।

- प्रकार्यात्मक समूह :– विषम परमाणु (O, N, S व हैलोजन)युक्त वह समूह जो हाइड्रोकार्बन के एक या अधिक हाइड्रोजन परमाणु को प्रतिस्थापित करके जुड़ जाते हैं तथा हाइड्रोकार्बन को विशिष्ट गुण प्रदान करते हैं, प्रकार्यात्मक समूह कहलाते हैं। जैसे :–

क्रियात्मक समूह	रासायनिक सूत्र	पूर्व लग्न	अनु लग्न
ऐल्कोहॉल	-OH	हाइड्रोक्सी	ऑल
कार्बोक्सिलिक समूह	-COOH	–	ऑइक अम्ल
एल्डिहाइड	-CHO	फार्मिल	एल
किटोन	$-\underset{\underset{O}{\|}}{C}-$	ऑक्सो	ऑन
द्विबंध	-C=C-	–	ईन
त्रिबंध	-C≡C-	–	टाइन

- **कार्बनिक यौगिकों का नामकरण:–**

  मूल कार्बन श्रृंखला + क्रियात्मक समूह

  (मेथ, ऐथ .... + ऐन, इन, आइन, ऑल)

  उदाहरण:– $H_3C\text{-}CH_2\text{-}CH_2\text{-}OH \longrightarrow$ प्रोपेन + ऑल → प्रोपेनॉल

- **<u>कार्बनिक यौगिको के रासायनिक गुण :–</u>**

1. दहन :– कार्बनिक यौगिकों का दहन O_2 की उपस्थिति में करने पर H_2O, CO_2 ऊष्मा व प्रकाश प्राप्त होता है।

$$\underset{\text{मेथेन}}{CH_4} + 2O_2 \longrightarrow CO_2 + 2H_2O + \text{ऊष्मा व प्रकाश}$$

- संतृप्त हाइड्रोकार्बन का दहन करने पर स्वच्छ ज्वाला के साथ जलता है तथा धुआँ नहीं बनता है।वाष्पशील अशुद्धि होने पर धुआँ व पीली ज्वाला के साथ जलता है । जैसे– दूध उफनने के बाद बर्नर की ज्वाला।
- असंतृप्त हाइड्रोकार्बन का दहन करने पर अत्यधिक धुएं के साथ पीली ज्वाला बनाता है।

2. ऑक्सीकरण :– हाइड्रोकार्बन का ऑक्सीकारकों क्षारीय $KMnO_4$ या अम्लीय $K_2Cr_2O_7$ की उपस्थिति में ऑक्सीकरण कराने पर अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है।

जैसे:– एल्काहॉल का ऑक्सीकरण होकर कार्बोक्सिलिक अम्ल का बनना

$$CH_3CH_2OH \xrightarrow[\text{अम्लीय } K_2Cr_2O_7]{\text{क्षारीय } KMnO_4} CH_3COOH + H_2O$$

3. संकलन अभिक्रिया :– जब असंतृप्त हाइड्रोकार्बन की Ni/Pd उत्प्रेरक की उपस्थिति में अभिक्रिया करवाई जाती है तो वे, संतृप्त हाइड्रोकार्बन में बदल जाते है। जैसे:– वनस्पति तेलों का हाइड्रोजनीकरण

$$\underset{\text{असंतृप्त हाइड्रोकार्बन (वनस्पति तेल)}}{R_2C=CR_2} \xrightarrow{Ni/Pd} \underset{\text{संतृप्त हाइड्रोकार्बन (वनस्पति घी)}}{R_2CH\text{-}CHR_2}$$

असंतृप्त हाइड्रोकार्बन (वनस्पति तेल) ↓ स्वास्थ्यवर्धक

संतृप्त हाइड्रोकार्बन (वनस्पति घी) ↓ स्वास्थ्य के लिए हानिकारक

4. प्रतिस्थापन अभिक्रिया :– संतृप्त हाइड्रोकार्बन की सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में Cl_2 गैस के साथ अभिक्रिया करवाने पर क्लोरीन परमाणु द्वारा H परमाणु का प्रतिस्थापन हो जाता है।

$$CH_4 + Cl_2 \rightarrow CH_3Cl + HCl$$

" महत्वपूर्ण कार्बनिक यौगिक "

(1) एथेनॉल – भौतिक गुण

(i) यह कमरे के ताप पर द्रव अवस्था में होता है।

(ii) इसका गलनांक व क्वथनांक कम होता है।

(iii) यह अच्छा विलायक है।

(iv) इसका उपयोग टिंचर आयोडिन, कफ सिरप, टॉनिक आदि औषधियों में किया जाता है।

(1) एथेनॉल – रासायनिक गुण

(i) सोडियम के साथ अभिक्रिया

$$2Na + 2CH_3CH_2OH \longrightarrow 2CH_3CH_2ONa + H_2$$

सोडियम, एथेनॉल → सोडियम एथॉक्साइड, हाइड्रोजन गैस

(ii) सान्द्र H_2SO_4 के साथ अभिक्रिया

$$CH_3CH_2OH \xrightarrow[\text{(निर्जलीकारक)}]{\text{सान्द्र } H_2SO_4} CH_2{=}CH_2 + H_2$$

एथेनॉल → एथीन

(2) एथेनॉइक अम्ल (एसीटिक अम्ल)

(A) भौतिक गुण –

1. इसके 3–4% विलयन को सिरका कहा जाता है जिसे परिरक्षक के रूप में उपयोग करते है।
2. इसका गलनांक बहुत कम (290K) होता है इसका कारण यह शीत के दिनों में जम जाता है अतः इसे ग्लेशल एसिटिक अम्ल कहते है।

(B) रासायनिक गुण –

1. एस्टरीकरण अभिक्रिया – एस्टर का निर्माण

$$CH_3COOH + CH_3CH_2OH \longrightarrow CH_3COO\,CH_2CH_3 + H_2O$$

एथेनॉइक अम्ल, एथेनॉल → एथिल एथेनोएट

2. क्षारक के साथ अभिक्रिया

$$CH_3COOH + NaOH \longrightarrow CH_3COONa + H_2O$$

एथेनाइॅक अम्ल, कास्टिक सोडा → सोडियम एथेनोएट

- **साबुन** :–साबुन लम्बी श्रृखंला वाले कार्बोक्सिलिक अम्लों के सोडियम या पौटेशियम लवण होते है।

  साबुन के अणु के दो सिरे होते है

  1. आयनिक सिरा (जलरागी सिरा) – जल में घुलनशील
  2. कार्बन श्रृंखला सिरा (जलविरागी सिरा) – वसा में घुलनशील

- **साबुन की सफाई क्रियाविधि व मिसेल निर्माण**

जब साबुन को जल में मिलाया जाता है तो साबुन के अणु जल की सतह पर इस प्रकार व्यवस्थित होते है कि इनका आयनिक सिरा (जलरागी सिरा) जल के अन्दर की ओर तथा कार्बन श्रृंखला (जलविरागी) चिकनाई या तैलीय गन्दगी की ओर होता है इस प्रकार साबुन के अणु एक गुच्छेनुमा संरचना बना लेते है जिसे मिसेल कहते है। मिसेल के केन्द्र में चिकनाई होती है तथा चारों ओर साबुन के अणु होते है, चिकनाई साबुन के जलविरागी सिरे में घुलकर कोलॉइडी विलयन बना लेती है जो कि पानी द्वारा आसानी से हटा ली जाती है।

- **अपमार्जक** :– अपमार्जक लम्बी श्रृंखला वाले वसीय – अम्लों के अमोनियम एवं सल्फोनेट लवण होते है।
- **अपमार्जक साबुन से श्रेष्ठ क्यों ?**

साबुन कठोर जल के साथ झाग कम देता है क्योंकि साबुन के अणु कठोर जल में उपस्थित Ca तथा Mg लवणों के साथ अभिक्रिया कर लेते है, इस कारण साबुन की चिकनाई के साथ अभिक्रिया नहीं हो पाती है तथा साबुन का अपव्यय भी होता है जबकि अपमार्जक के अणु कठोर जल में उपस्थित Ca तथा Mg

लवणों के साथ क्रिया करके अघुलनशील पदार्थ नहीं बनाते है अतः ये चिकनाई के साथ आसानी से क्रिया कर उसे हटा देते है।

- **<u>अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु :</u>**

1. गैसीय पदार्थो के जलने पर ज्वाला उत्पन्न होती है इसी कारण LPG जलते समय ज्वाला उत्पन्न करती है।
2. लकड़ी को जलाने पर आरम्भ में ज्वाला उत्पन्न होती है।
3. कार्बनिक यौगिकों के अपूर्ण दहन होने पर काले धुएं के साथ पीली ज्वाला उत्पन्न होती है।
4. ऐल्काहॉल की अधिक मात्रा में सेवन से उपापचयी क्रिया धीमी हो जाती है तथा केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र कमजोर हो जाता है।
5. मेथेनॉल का प्रभाव विषैला होता है। इसकी थोड़ी सी मात्रा लेने पर मृत्यु हो जाती है।
6. यकृत कोशिकाओं में मेथेनॉल, मेथेनैल में ऑक्सीकृत होकर यकृत कोशिकाओं को नष्ट कर देता है। मेथेनैल चाक्षुष तंत्रिका को भी प्रभावित करता है जिससे व्यक्ति अंधा हो जाता है।
7. ऐथेनॉल का दुरूपयोग रोकने के लिए मेथेनॉल जैसा जहरीला पदार्थ मिला दिया जाता है जिससे यह पीने योग्य नहीं रहता है। एल्काहॉल की पहचान करने के लिए इसमें रंजक मिलाकर उसका रंग नीला बना दिया जाता है। इसे विकृत एल्कोहॉल कहते है।
8. एल्कोहॉल में पेट्रोल मिलाकर स्वच्छ ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह पर्याप्त ऑक्सीजन की उपस्थिति में दहन होने पर केवल CO_2 व जल उत्पन्न करता है।

अध्याय–5
तत्वों का आवर्त्त वर्गीकरण

- तत्वों को उनके गुणधर्मों में समानता के आधार पर वर्गीकरण किया गया हैं।
- **डॉबेराइनर का त्रिकः**–डॉबेराइनर ने तीन–तीन तत्वों के ऐसे समूह बनाये जिनमें पहले व तीसरे तत्वों के परमाणु भार के योग का माध्य बीच वाले तत्व के परमाणु भार के बराबर होता हैं। जैसे–Li,Na,K
  कमी–इस नियम से केवल तीन त्रिक ही बन सके थे।
- **न्यूलैण्ड्स का अष्टक सिद्धान्तः**–न्यूलैण्ड ने तत्वों को परमाणु द्रव्यमान के आरोही क्रम में व्यवस्थित किया तो उन्होनें पाया कि आठवें तत्व के गुणधर्म प्रथम तत्व के समान प्राप्त होते हैं।उन्होनें इसकी तुलना संगीत के आठ सुरों से की।
  कमी–यह नियम केवल कैल्शियम तक लागू होता हैं।
  न्यूलैण्ड्स ने दो तत्वों को एक साथ रख दिया था।
- **मैण्डेलीफ की आवर्त्त सारणीः**–

आवर्त्त नियम–तत्वों के भौतिक एवं रासायनिक गुणधर्म उनके परमाणु भारों के आवर्त्तीफलन होते है।इनके समय तक केवल 63 तत्व ज्ञात थे।

मैण्डलीफ की आवर्त्त सारणी की विशेषताएँ–

1. आवर्त्त सारणी परमाणु भार पर आधारित हैं।
2. तत्वों को परमाणु भार के आरोही क्रम में जमाया गया ।
3. इसकी सारणी में 8 वर्ग व 6 आवर्त्त थे।
4. धातुओं को बायीं व अधातुओं को दायीं ओर रखा गया है।

कमियाँः–

1. हाइड्रोजन की स्थिति निश्चित नहीं थी।
2. समस्थानिकों को स्थान नहीं दिया गया था।

मैण्डेलीफ की आवर्त्त सारणी की उपलब्धियाँ–

इनके समय तक जो तत्व ज्ञात नहीं थे,उनके लिए रिक्त स्थान छोड़े जिससे उनकी खोज सम्भव हो सकी।

- **आधुनिक आवर्त्त सारणीः**–

The Periodic Table

आधुनिक आवर्त्त सारणी

1 H																	2 He
3 Li	4 Be											5 B	6 C	7 N	8 O	9 F	10 Ne
11 Na	12 Mg											13 Al	14 Si	15 P	16 S	17 Cl	18 Ar
19 K	20 Ca	21 Sc	22 Ti	23 V	24 Cr	25 Mn	26 Fe	27 Co	28 Ni	29 Cu	30 Zn	31 Ga	32 Ge	33 As	34 Se	35 Br	36 Kr
37 Rb	38 Sr	39 Y	40 Zr	41 Nb	42 Mo	43 Tc	44 Ru	45 Rh	46 Pd	47 Ag	48 Cd	49 In	50 Sn	51 Sb	52 Te	53 I	54 Xe
55 Cs	56 Ba	57-71	72 Hf	73 Ta	74 W	75 Re	76 Os	77 Ir	78 Pt	79 Au	80 Hg	81 Tl	82 Pb	83 Bi	84 Po	85 At	86 Rn
87 Fr	88 Ra	89-103	104 Rf	105 Db	106 Sg	107 Bh	108 Hs	109 Mt	110 Ds	111 Rg	112 Cn	113 Nh	114 Fl	115 Mc	116 Lv	117 Ts	118 Og
		57 La	58 Ce	59 Pr	60 Nd	61 Pm	62 Sm	63 Eu	64 Gd	65 Tb	66 Dy	67 Ho	68 Er	69 Tm	70 Yb	71 Lu	
		89 Ac	90 Th	91 Pa	92 U	93 Np	94 Pu	95 Am	96 Cm	97 Bk	98 Cf	99 Es	100 Fm	101 Md	102 No	103 Lr	

- **आधुनिक आवर्त्त नियमः–** मौजले के अनुसार–तत्वों के भौतिक व रासायनिक गुणधर्म उनके परमाणु संख्या के आवर्तीफलन होते है।
- **आधुनिक आवर्त्त सारणी की विशेषताएँ–**

  1.सारणी परमाणु संख्या पर आधारित है।

  2.तत्वों को परमाणु संख्या के आरोही क्रम में व्यवस्थित किया।

  3.इसकी सारणी में 18 वर्ग व 7 आवर्त्त हैं।

  4.धातुओं को बायीं व अधातुओं को दायीं ओर रखा गया हैं।
- **कमियाँ –**

  1.हाइड्रोजन की स्थिति निश्चित नहीं है।
- **उपलब्धि–**

  1.तत्वों को परमाणु संख्या के आरोही क्रम में व्यवस्थित करनें से मेण्डेलीफ की आवर्त्त सारणी की कमियाँ दूर हो गयी।
- **महत्वपूर्ण बिन्दुः–**

1. परमाणु के कोशों (K,L,M,N,.....) में इलेक्ट्रॉनों की संख्या सूत्र $2n^2$ से ज्ञात करते हैं।यहा K के लिए n= 1, Lके लिए n=2.......होगा।
2. आधुनिक आवर्त्त सारणी में एक विकर्ण रेखा धातुओं को अधातुओं से अलग करती है, इस रेखा पर उपस्थित तत्व उपधातु कहलाते हैं। इनमें धातु एवं अधातु दोनों के गुण मिलते हैं। उदाहरण–B,Si,Ge,As,Sb,Te,Po

   ट्रिक– भगवान शिव जी ऐश्वर्या सब टी पो

   (B Si Ge As Sb Te Po)

3. सारणी में किसी आवर्त्त में बायें से दायें जाने पर धात्विक गुणों में कमी होती है जबकि अधात्विक गुण बढ़ते हैं, लेकिन वर्ग में उपर से नीचे जाने पर धात्विक गुण बढ़ते है जबकि अधात्विक गुण में कमी होती है।
4. सारणी में किसी आवर्त्त में दायें से बायें जाने पर परमाणु के आकार में कमी होती है जबकि वर्ग में उपर से नीचे जाने पर परमाणु का आकार बढ़ता जाता हैं।

पाठ–6

जैव प्रक्रम

जैव प्रक्रम– वे सभी क्रियाऐ जो सम्मिलित रूप से अनुरक्षण (जीवन की सक्रियता दिखाने) का कार्य करते है जैव प्रक्रम कहलाते हैं।

1. चार प्रमुख जैव प्रक्रम– पोषण, श्वसन, वहन और उत्सर्जन

2. पोषण–पोषण दो प्रकार के होते स्वपोषी पोषण व विषमपोषी पोषण –

स्वपोषी पोषण	**विषमपोषी पोषण**
1 पोषण की वह विधि जिसमें जीवधारी सरल अकार्बनिक पदार्थो का निर्माण स्वयं कर लेते हैं।	पोषण की विधि, जिसमें जीवधारी सरल अकार्बनिक पदार्थो से भोजन निर्मित नहीं कर पाते और दूसरे जीवों से प्राप्त करते हैं, विषमपोषी पोषण कहलाता हैं।
उदाहरण– सभी हरे पौधे, नील हरित शैवाल एव प्रकाश संश्लेषी जीवाणु	उदाहरण– सभी जन्तु, कवक, अधिकांश जीवाणु, परजीवी पादप

3. **प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया–** हरे पौधों में पर्ण हरित (क्लोरोफिल) वर्णक मिलता है, जिसकी सहायता से सूर्य के प्रकाश में CO_2 व जल मिलकर भोजन का निर्माण करते है तथा ऑक्सीजन गैस निकालती है, इसे प्रकाश संश्लेषण कहते हैं।

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{सूर्य का प्रकाश}]{\text{पर्णहरित}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2$$

4. **प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया के महत्वपूर्ण कारक–**

1. कार्बन डाई ऑक्साइड (co_2)
2. जल (H_2O)
3. पादपों में उपस्थित क्लोरोफिल
4. सूर्य का प्रकाश

5. **प्रकाश संश्लेषण प्रक्रम में होने वाली मुख्य तीन घटनाऍ**

1. क्लोरोफिल द्वारा प्रकाश ऊर्जा को अवशोषित करना।
2. प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में रूपान्तरित करना।
3 कार्बन. डाई आक्साइड का कार्बोहाइड्रेड में परिवर्तन।

6.रंध्र के कार्य एवं क्रियाविधिः–

(1) पत्ती की सतह पर सूक्ष्म छिद्र हाते हैं जिनसे प्रकाश संश्लेषण तथा श्वसन के समय गैसों का आदान–प्रदान होता है। इन छिद्रों को रन्ध्र कहते हैं।

(2) इन रन्ध्रों द्वारा वाष्पोत्सर्जन प्रक्रियासे जल की हानी भी होती है।

(3) इन रन्ध्रों पर दो द्वार कोशिकाए होती है जो कि रन्ध्र के खुलने तथा बंद होने को नियंत्रित करती है।दिन के समय जब द्वार कोशिकाओं के अन्दर जल प्रवेश करता है तो वह फूल(स्फीत) जाती है।जिससे रन्ध्र खुल जाता है तथा रात्री के समय जब इन कोशिकाओं से जल बाहर निकलता है तो वह सिकुड(शिथिल) जाती है।जिससे रंन्ध्र बंद हो जाता है।

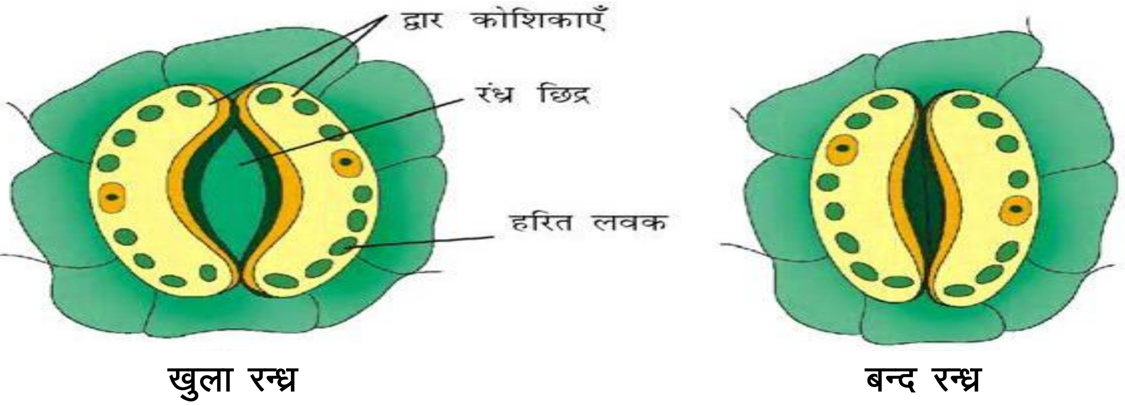

खुला रन्ध्र **बन्द रन्ध्र**

7.अमीबा में पोषण विधि का सचित्र वर्णन– अमीबा कोशिकीय सतह से अंगुली जैसी प्रवर्ध की मदद से भोजन ग्रहण करता है। यह प्रवर्ध भोजन के कणों को घेर लेते है तथा सगलित होकर खाद्य रिक्तिका बनाते हैं। खाद्य रिक्तिका के अन्दर जटिल पदार्थो का विघटन सरल पदार्थो में किया जाता है और वे कोशिका द्रव्य में विसरित हो जाते हैं। बचा हुआ अपच पदार्थ कोशिका की सतह की ओर गति करता हैं तथा शरीर से बाहर निष्कासित कर दिया जाता हैं।

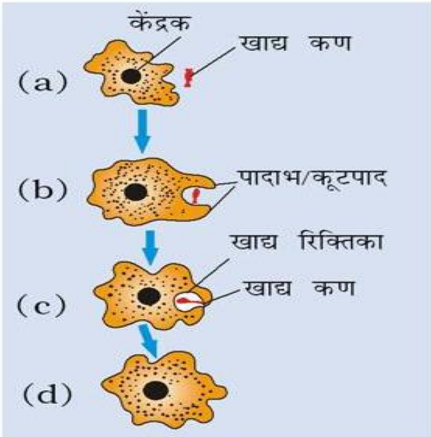

8. मानव पाचन तन्त्र संरचना तथा क्रियाविधि – चित्र को याद रखकर सारी क्रियाविधि याद की जा सकती है।

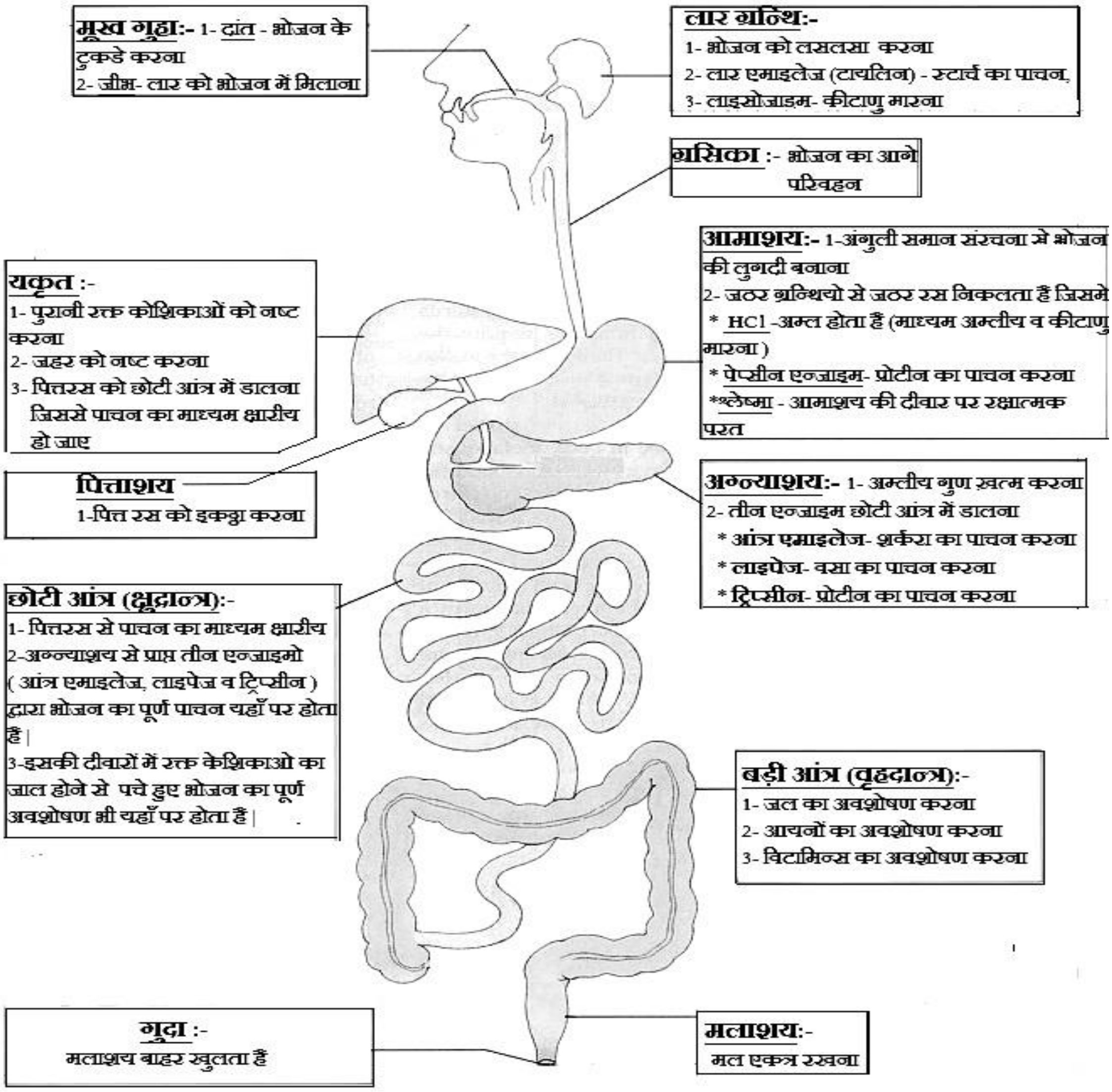

9. दंत क्षरण– दंतक्षरण या दंतक्षय इनैमल तथा डैंटीन के धीरे–धीरे मृदुकरण के कारण होता हैं। इसका प्रारम्भ तब होता है जब जीवाणु शर्करा पर क्रिया करके अम्ल बनाते हैं। अनेक जीवाणु कोशिका खाद्य कणों के साथ मिलकर दांतों पर चिपक कर दंतप्लाक बना देते हैं। प्लाक दांत को ढक लेता है इसलिए लार अम्ल को उदासीन करने के लिए दंत सतह तक नहीं पहुंच पाती हैं।

10.श्वसन :– **वायवीय व अवायवीय श्वसन में अंतर**

वायवीय श्वसन	अवायवीय श्वसन
1–यह क्रिया आक्सीजन की उपस्थिति में होती हैं।	1–यह क्रिया आक्सीजन की अनुपस्थिति में होती हैं।
2–इसमें ग्लूकोज का पूर्ण आक्सीकरण होता हैं।	2–इसमें ग्लूकोज का अपूर्ण आक्सीकरण होता हैं।
3–इसमें अपेक्षाकृत अधिक ऊर्जा प्राप्त होती हैं।	3–इसमें अपेक्षाकृत कम ऊर्जा प्राप्त होती हैं
4–इस क्रिया के अन्त में CO_2 और जल बनता हैं।	4–इस क्रिया के अन्त में CO_2 और एथिल एल्कोहॉल (C_2H_5OH) बनता हैं।

11. **जलीय जीवों की तुलना में स्थलीय जीवों की श्वसन दर कम क्यों होती हैं?**

जलीय जीव पानी में धुलित आक्सीजन का उपयोग श्वसन के लिए करते हैं, चूंकि पानी में धुलित आक्सीजन कि मात्रा कम होती है इस कारण शरीर कि आक्सीजन आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए जलीय जीवों कि श्वसन दर अधिक होती हैं। लेकिन स्थलीय जीव वायुमंडलीय आक्सीजन का उपयोग करते है जो कि पानी की तुलना में बहुत अधिक होती हैं,इस कारण स्थलीय जीवों की श्वसन दर जलीय जीवों की तुलना में कम होती हैं।

12. मानव श्वसन तंत्र एवं उसकी क्रिया विधि–

मानव में श्वसन फेफड़ों द्वारा होता हैं। मनुष्य में श्वसन तंत्र को दो भागों में बांटा जा सकता हैं–

1. श्वसन मार्ग 2. फेफड़े

1– श्वसन मार्ग– इस मार्ग से होकर वायु फेफड़ों में प्रवेश करती हैं तथा बाहर जाती हैं। इस मार्ग के निम्न भाग हैं।

नासाद्वार– मनुष्य में एक जोडी नासाद्वार पाये जाते हैं। वायु शरीर में इसी के द्वारा जाती हैं।

नासापथ– प्रत्येक नासाद्वार अपनी ओर से नासापथ में खुलता हैं। वायु में मिश्रित धूल के कण एवं जीवाणु श्लेष्मा में चिपककर इसी पथ के अग्र भाग में रह जाते है और स्वच्छ निस्पंदित वायु फुफ्फस तक पहुँचती हैं।

ग्रसनी– नासापथ ग्रसनी में खुलता हैं। ग्रसनी कंठ में खुलती हैं।

कंठ– इसे स्वर यंत्र भी कहते हैं। कंठ आगे श्वासनली में खुलते हैं।

श्वासनली– यह कंठ से प्रारम्भ होकर गर्दन में होती हुई वक्षगुहा तक स्थित होती हैं।

श्वसनी– श्वासनली वक्ष गुहा में दो भागों में बंट जाती हैं जिन्हें क्रमशः दाई एवं बाई श्वसनी कहते हैं। प्रत्येक श्वसनी फेफड़ों में प्रवेश करती हैं।

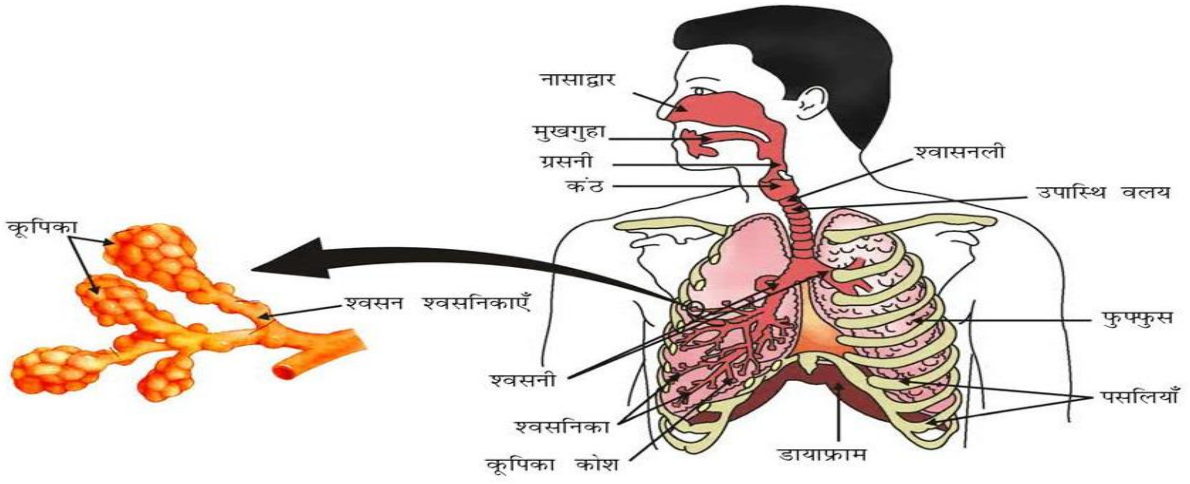

मानव श्वसन तंत्र

2– फेफड़े– फेफड़ों में श्वसनी आगे कई शाखाओं में बंट जाती हैं जिन्हें श्वसनिकाएं कहते हैं। प्रत्येक श्वसनिका के आगे गुब्बारे जैसी संरचना होती है जिसे कूपिका कहते है। कूपिकाओं की दीवारों में रक्त कोशिकाओं का जाल बिछा रहता हैं जिससे विसरण द्वारा O_2 तथा CO_2 का आदान प्रदान होता हैं।

13 **लसिका**:– जब रक्त कोशिकाओं में रक्त दाब अधिक होता है तो उस समय रक्त में उपस्थित प्लाज्मा,प्रोटीन तथा कुछ रक्त कणिकाऐ कोशिकाओ की दीवारो से बाहर रिक्त स्थानो में आ जाती है जिसे लसीका कहते है।

लसीका के कार्यः–

1.यह उन भागों में जहां रक्त नहीं पहुचता पाता है वहां पोषण एंव आक्सीजन की पूर्ति करती है।

2.छोटी आंत्र मे से वसाओ को अवशोषित कर उनका अभिगमन करता है।

3.इसमे उपस्थित लिम्फोसाइट्स (लसिकाणु) एंव एन्टिबाडी ,जीवाणुओ को समाप्त करने मे सहायता करते है।

14 धमनी एंव शिराओं मे अन्तर–

धमनी	शिरा
1.हृदय से अंगो तक रक्त को पहुँचाती है	1.अंगो से हृदय तक रक्त को पहुँचाती है।
2.इसमे रक्त दाब अधिक होता है।	2.इसमे रक्त दाब कम होता है।
3.इसकी दीवारे माटी तथा लचीली होती है।	3.इसकी दीवारे कम मोटी तथा कम लचीली होती है
4.इसमे वाल्व नहीं पाये जाते है।	4.इसमे वाल्व पाये जाते है।

विषेशः– धमनी की दीवारे शिरा की अपेक्षा मोटी होती है क्यो कि धमनी मे रक्त अधिक दाब से बहता है।

15 मानव ह्रदय कि संरचना तथा क्रियाविधि –

1. मानव का ह्रदय वक्षीय गुहा मे दोनो फफुफुसों के बीच अधर तल पर कुछ बांयी ओर स्थित होता है।

2.यह गुलाबी रंग का शंख के आकार का खोखला एंव मॉसल भाग है जो मनुष्य की मुट्ठी के माप का होताहै।

आन्तरिक संरचनाः– मनुष्य का ह्रदय चार वेश्म मे बंटा होता है,ऊपर के दो वेश्म आलिन्द तथा नीचे के दो वेश्म निलय कहलाते है, निलय की दीवारे आलिन्द की दीवारो की अपेक्षा मोटी भित्ती वाली होती है। प्रत्येक आलिन्द अपनी ओर के निलय में आलिन्द निलय छिद्र द्वारा खुलता है इन छिद्रों मे कपाट पाये जाते हैं।बाँये आलिन्द तथा बाँये निलय के बीच द्विवलनी कपाट दांये आलिन्द तथा दांये निलय के बीच त्रिवलनी कपाट होता है।

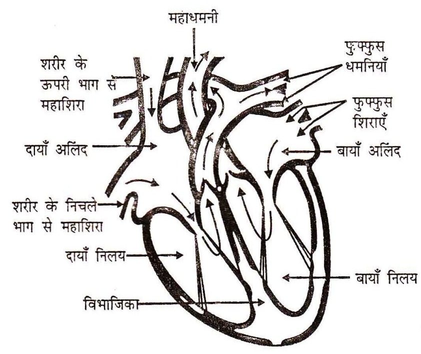

मानव हृदय की काट का चित्र

क्रियाविधिः– ह्रदय के दांये भाग में अशुद्ध रक्त होता है जबकि बांये भाग में शुद्ध रक्त होता है।अंगो से अशुद्ध रक्त महाशिरा द्वारा दांये आलिन्द में आता है,जो कि इसमें संकुचन से दाये निलय मे जाता है।जहां से रक्त शुद्ध होने के लिए दांये निलय में संकुचन से फुफ्फुसीय धमनी द्वारा फुफ्फुस मे चला जाता है। इसके बाद फुफ्फुस शुद्ध हुआ रक्त फुफ्फुसीय शिरा द्वारा बांये आलिन्द में आता है।इसमे संकुचन से यह बांये निलय में चला जाता है,बांये निलय में संकुचन से शुद्ध रक्त महाधमनी द्वारा अंगो को चला जाता है,इस प्रकार अंगो मे जाने से पहले रक्त दो बार ह्रदय में आता है इसलिए इसे **दोहरा परिसंचरण** कहते है।

छात्रों हेतु याद रखने का तरीका
आलिन्द मतलब 'अ' यानि आना। आलिन्द में रक्त आता है।
निलय मतलब ' नि' यानि निकलना निलय से रक्त निकलता है।
दांये भाग यानि 'द', द से दूषित (अशुद्ध) रक्त होता है।
बांये भाग यानि 'ब', ब से बढ़िया (शुद्ध) रक्त होता है।
धमका कर ले जाती है।(धमनी रक्त ह्रदय से अंगो तक ले जाती है।)
शरमा के लाती है।(शिरा अंगो से ह्रदय में रक्त लाती है।)

विशेषः– 1.स्तनधारियों तथा पक्षियो मे आक्सीजनित तथा विआक्सीजनित रक्त को अलग रखना इसलिये आवश्यक है क्यो कि इन्हे अधिक उर्जा की आवश्यकता होती है,हृदय के चार कोष्ठ होने से अशुद्ध रक्त तथा शुद्ध रक्त आपस में आपस मे नहीं मिल पाते है ,इससे शरीर को अधिक आक्सीजन मिल पाती है जिससे अधिक उर्जा की आवश्यकता पूर्ण हो जाती है।

2.निलय की दीवारें आलिन्द से इसलिये मोटी होती है क्योकि निलय रक्त को सम्पूर्ण शरीर में पम्प करने का कार्य करता है,इसके लिए अधिक दाब लगाने कि आवश्यकता होती है जिससे दीवारे मोटी होती है।

16 रक्त दाबः– रूधिर वाहिकाओ की भित्ति के विरूद्ध जो दाब लगता है उसे रक्त दाब कहते है।धमनी के अन्दर रूधिर का दाब निलय प्रकुचन(संकुचन)के दौरान प्रकुचन दाब तथा निलय अनुशिथिलन (शिथिलन) के दौरान अनुशिथिलन दाब कहलाता है। सामान्य प्रकुंचन दाब लगभग 120mm तथा अनुशिथिलन दाब लगभग 80mm होता है।रक्त दाब को **स्फाईग्मोमैनोमीटर** नामक यंत्र द्वारा नापा जाता है।

नोटः– 1.मानव में हीमोग्लोबीन कि कमी होने से रक्त द्वारा आक्सीजन को कोशिकाओ तक पहुचाने में कमी आती है जिससे थकान,बैचेनी,कमजोरी जैसी स्थितियां उत्पन्न हो जाती है।

2.रक्त में आक्सीजन का वहन लाल रक्त कणिकाओ मे उपस्थित हीमोग्लोबिन द्वारा होता है,जबकि कार्बन डाईआक्साइड का वहन रक्त मे उपस्थित जल मे घुलित अवस्था में होता है।

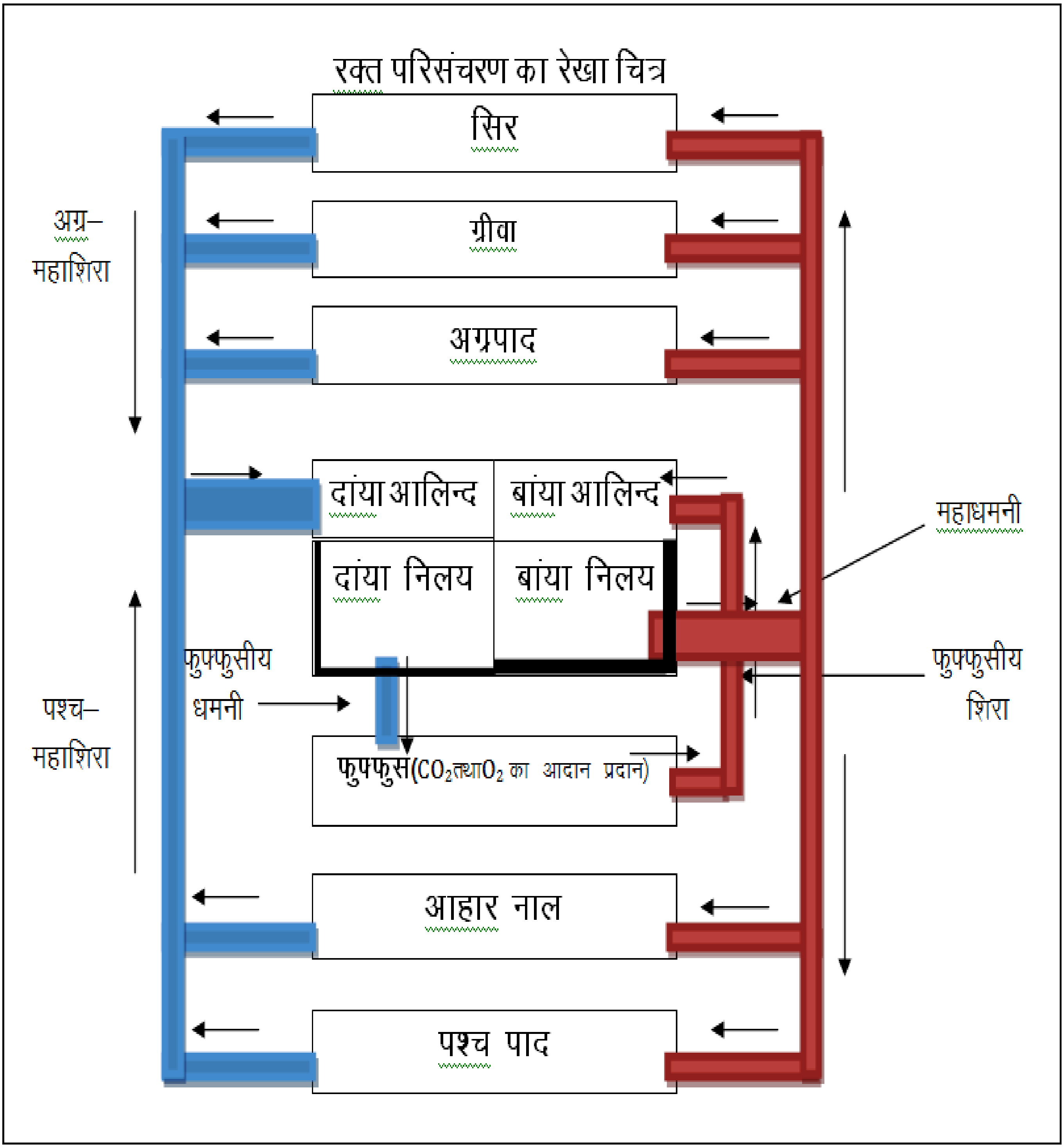

17 पादपो मे परिवहन :–

पादपो मे परिवहन के लिये दो प्रकार के संवहन उत्तक पाये जाते है जिसमे जायलम नामक संवहन उत्तक जल तथा खनिज लवण का संवहन करता है (जडो से ऊपर की ओर) तथा फ्लोएम नामक उत्तक खाद्य पदार्थो का संवहन(ऊपर से नीचे की ओर)पादप मे जडों द्वारा जल अवशोषण के लिए पौधे मे होने वाली वाष्पोत्सर्जन प्रक्रिया(पौधे में उपस्थित जल का वाष्प के रूप में बाहर निकलना)उत्तरदायी होती है।

छात्र हेतु याद रखने का तरीका
जायलम द्वारा **ज**ल का संवहन होता है। (जायलम–जल)
फलोएम द्वारा **फू**ड (खाद्य पदार्थ) का संवहन होता है। फलोएम–फूड)

18 .मानव उत्सर्जन तंत्र का सचित्र वर्णन :–

उत्सर्जनः– उपापचयी प्रक्रियाओ के फलस्वरूप निर्मित नाइट्रोजन युक्त अपशिष्ट उत्पादों एंव अतिरिक्त लवणों को बाहर त्यागना उत्सर्जन कहलाता है। उत्सर्जन अंगो को सामूहिक रूप से उत्सर्जन तंत्र कहते है।

1.वृक्कः– मनुष्य में एक जोडी वृक्क पाये जाते है। यह दोनो वृक्क उदर में कशेरूक दण्ड दोनो ओर स्थित होते है।

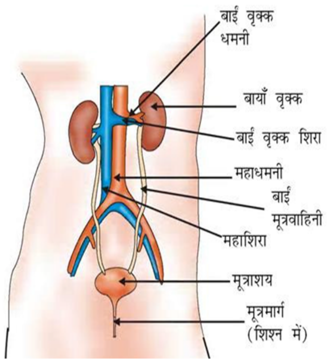

2.मूत्र वाहिनियां:– ये वृक्क से निकल कर मूत्राशय तक जाती हैं।इसकी भित्ति में क्रमाकुंचन पाया जाता है,जिसके फलस्वरूप मूत्र आगे की ओर बढता है।

3.मूत्राशय:– यह उदर के पिछले भाग में स्थित होता है,मूत्राशय मे मूत्र वाहिनियां आकर खुलती है व इसमें मूत्र को संग्रहित किया जाता है।

4.मूत्रमार्ग:– मूत्राशय का पश्च भाग सकरा हो कर एक पतली नलिका में परिवर्तित हो जाता है जिसे मूत्र मार्ग कहते है।

19. वृक्काणु(नेफ्रोन)का सचित्र वर्णनः– प्रत्येक वृक्काणु का अग्र सिरा प्याले समान होता है जिसे बोमन सम्पुट कहते है,इसमें रक्त कोशिकाओ का गुच्छे समान संरचना होती है जिसे कोशिका गुच्छ (ग्लोमेरूलस)कहते है। इससे उत्सर्जी पदार्थ छन कर बोमन सम्पुट में आ जाते है बोमन सम्पुट से आगे एक नली निकली होती है जिसके चारो ओर रक्त केशिकाओ का जाल बिछा होता है,जहां पर छनित से उपयोगी पदार्थो का वापस अवशोषण होता है,शेष बचा उत्सर्जी पदार्थ सभी वृक्काणुओं कि नलियो के जुडने से बनी मूत्र नलिका द्वारा मुत्राशय मे चला जाता है जो समय समय पर मूत्र मार्ग द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है।

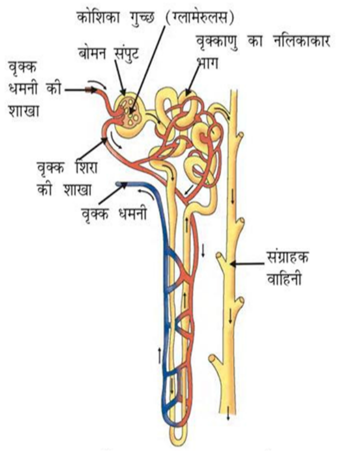

वृक्काणु की संरचना

20. अपोहन एंव इसकी क्रियाविधिः–कभी कभी संक्रमण या उचित रूधिर आपूर्ति नं होने या अन्य कारणो से वृक्क क्षतिग्रस्त होकर काम करना बन्द कर देता है। ऐसी स्थिति में रूधिर में नाइट्रोजनी अपशिष्ट उत्पादो (यूरिया) की मात्रा बढ जाती है। रूधिर से इन नाइट्रोजनी अपशिष्ट उत्पादो को निकालने के लिए कृत्रिम वृक्कीय युक्ति अपनाई जाती है जिसे अपोहन कहते है।

1.**पाचन में श्लेष्मा की भूमिका** –आहार नाल की कोशिकाओं ,ऊतको आदि को पाचक एन्जाइम तथा HCl के दुष्प्रभाव से बचाए रखना।

2.ATPका पूरा नाम–**एडिनोसीन ट्राई फास्फेट**

3.ऐसी ग्रन्थि जो हार्मोन व एन्जाइम दोनो स्त्रावित करती है–**अग्न्याशय**

4.शरीर की सबसे बडी ग्रन्थि–**यकृत**

पाठ–7 नियन्त्रण एवं समन्वय

जन्तु तंत्रिका तंत्र– जंतुओ में नियंत्रण तथा समन्वय तंत्रिका तंत्र तथा पेशीय उत्तक द्वारा किया जाता हैं। हमारे पर्यावरण से सभी सूचनाओं का पता कुछ तंत्रिका कोशिकाओं के विशिष्ट सिरों द्वारा लगाया जाता हैं। ये ग्राही प्रायः हमारी पांच ज्ञानेन्द्रियों में स्थित होते है ।

पांचो ज्ञानेद्रियों का नियंत्रण एंव समन्वय तत्रिका तंत्र द्वारा होता है।

तंत्रिका उत्तक तंत्रिका कोशिकाओं या न्यूरोन के एक संगठित जाल का बना होता है यह सूचनाओं को विद्युत आवेश द्वारा शरीर के विभिन्न भागों में संवहन करता हैं।

एक सामान्य तंत्रिका कोशिका(न्यूरोन) के तीन मुख्य भाग होते हैं–

1. कोशिका काय
2. द्रुमिका
3. तंत्रिकाक्ष

1 कोशिका काय– संरचना में यह कोशिका के समान हैं जिसमें केन्द्रक तथा कोशिका द्रव्य पाया जाता है।यह उद्दीपन के संवेग को विद्युत आवेश में बदलती हैं।

2 द्रुमिका– यह पतली धागे के समान संरचना है जो कोशिकाय से जुड़ी रहती हैं।यह उद्‌दीपन ग्रहण करती है।

3 तंत्रिकाक्ष– यह एक लम्बी पतली संरचना है जो एक तरफ कोशिकाय व दूसरी तरफ ग्राही या संवेदी अंगो से जुड़ी रहती हैं।

4 सिनप्स :– दो न्यूरोन के मध्य अर्न्तगर्थन(रिक्तस्थान) को जोड कहते है।जिसमे न्यूरोरसायन पाये जाते है।एक न्यूरोन का पश्च भाग दूसरे न्यूरोन के शीर्ष भाग से जुडा रहता है ।

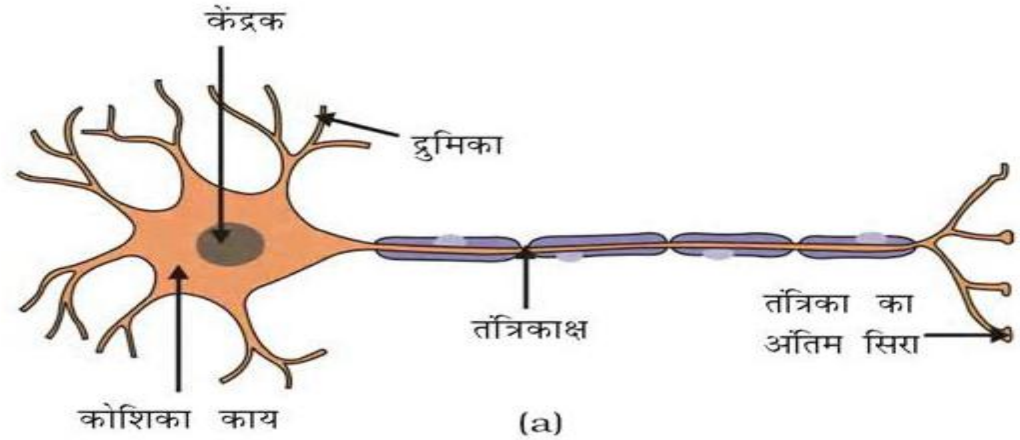

तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन)

तंत्रिका कोशिकाओं के प्रकार–

1. **संवेदी तंत्रिका कोशिका**– शरीर के विभिन्न भागों से संवेदनाओं को मस्तिष्क (मेरूरज्जु)तक लाती हैं।
2. **प्रेरक तंत्रिका कोशिका**– मस्तिष्क से आदेशों को पेशियों तक पहुचाती हैं।
3. **बहुध्रुवी तंत्रिका कोशिका**– यह संवेदी व प्रेरक दोनों तंत्रिकाओं का कार्य करती हैं।

तंत्रिका कोशिका (न्यूरॉन) के कार्य–

1. ये कोशिकाएँ उद्दीपनों को संवेदी अंग से मेरूरज्जु (मस्तिष्क) तक ले जाती हैं और वापस कार्यकारी अंगो तक लाती हैं।
2. **प्रतिवर्ती क्रिया**– किसी घटना की अनुक्रिया के फलस्वरूप अचानक हुई क्रिया को प्रतिवर्ती क्रिया कहते है। जैसे–
   - गर्म वस्तु के छू जाने पर हाथ खींचना।
   - स्वादिष्ट भोजन को देखकर मुंह में लार आना।
   - कांटे या कील पर अन्जाने हाथ या पैर रखने पर तुरन्त हटा लेना।

   प्रतिवर्ती क्रियाओं का संचालन मेरूरज्जु द्वारा होता हैं।

प्रतिवर्ती चाप– अंगो से तंत्रिका आवेश का मेरूरज्जु तक तथा मेरूरज्जु से निर्देशों को अंगो तक पहुचाने के मार्ग को प्रतिवर्ती चाप कहते हैं। प्रतिवर्ती चाप मेरूरज्जु में ही बनते हैं।

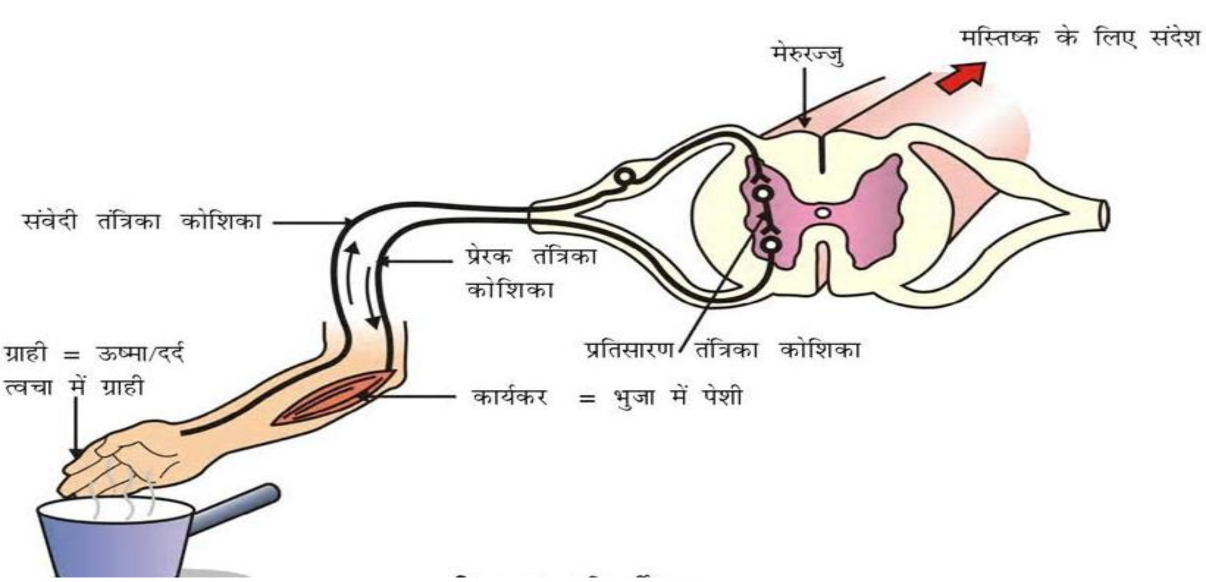

प्रतिवर्ती चाप

तंत्रिका तंत्र के 2 मुख्य भाग होते हैं–

1. केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र 2. परिधीय तंत्रिका तंत्र

1 केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र– यह तंत्रिका तंत्र मस्तिष्क तथा मेरूरज्जु से मिलकर बनता है। यह शरीर के सभी भागों से सूचनाएं प्राप्त कर उन सूचनाओं के अनुसार विश्लेषण करता हैं।

(A)**मस्तिष्क**– यह शरीर का सबसे समंवय केन्द्र है जो कि अस्थि कवच (खोपड़ी) में सुरक्षित रहता हैं। मस्तिष्क के चारों ओर 3 झिल्लियॉ होती है जो मस्तिष्क की बाह्य आघातों से सुरक्षा करती हैं।

मस्तिष्क के 3 भाग होते हैं

अग्रमस्तिष्क– यह सोचने, देखने, सूंघने व समझने अर्थात् स्मरण शक्ति का आधार हैं।

मध्यमस्तिष्क– यह दृष्टिज्ञान तथा कुछ अनैच्छिक क्रियाओं पर नियंत्रण का कार्य करता हैं।

पश्चमस्तिष्क– इसके 2 मुख्य भाग होते हैं

1. **अनुमस्तिष्क**– यह शरीर का सन्तुलन बनाने का कार्य करता हैं।
2. **मेडुला ऑब्लागेटा**– यह शरीर की सभी अनैच्छिक क्रियाओं जैसे– श्वसन, पाचन, हृदय की धड़कन, लार आने आदि का नियन्त्रण करता है।

(B)**मेरूरज्जू**–यह प्रतिवर्ती क्रिया का संचालन करता हैं।

2 परिधीय तंत्रिका तंत्र– यह मस्तिष्क से निकलने वाली कपाल तंत्रिकाओं व मेरूरज्जू से निकलने वाली मेरू तंत्रिकाओं से मिलकर बना होता हैं।

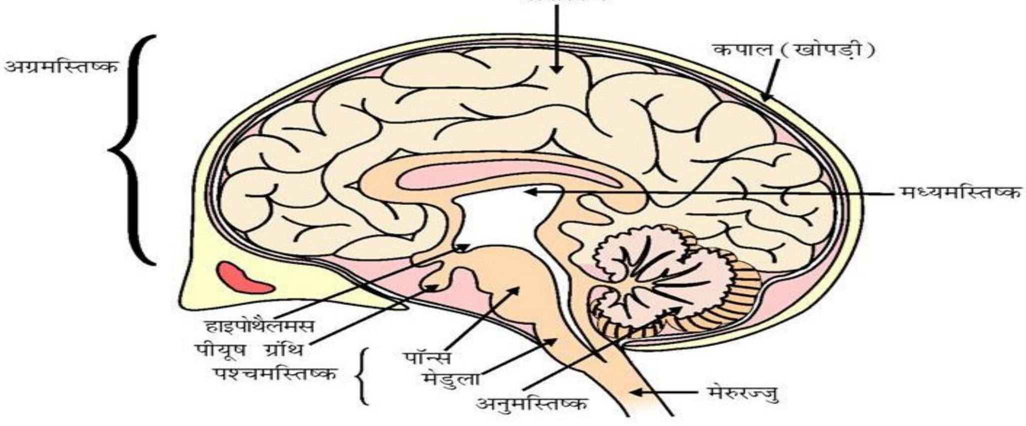

नियन्त्रण एवं समन्वय तंत्र की आवश्यकता क्यों ?

सजीवों का शरीर कोशिका, उत्तक, अंग, अर्थात विभिन्न तंत्रो से मिलकर बना होता हैं। प्रत्येक तंत्र के सभी अंग अपना कार्य सही प्रकार कर सके इसके लिए जरूरी है कि उन पर किसी प्रकार का नियन्त्रण हो ताकि वे समन्वय (सन्तुलन) के साथ कार्य करे।

उदाहरण– जब हम खाना खाते है तब हमारी आँखे देखती हैं भोजन कहाँ रखा हैं। नाक भोजन की गंध का पता लगा लेती है हमारे दाँत भोजन को चबाते है। ये सारे क्रियाकलाप एक क्रियाकलाप किसी कारण नहीं हो पाता है तो पोषण की प्रकिया में व्यवधान आ सकता हैं।

अतः जीव में नियन्त्रण एवं समन्वय तंत्र की आवश्यकता होती हैं।

पादपों में समन्वय– पादपों में क्रियाओं के नियन्त्रण तथा समन्वय के लिए ना तो तंत्रिका तंत्र होता हैं और न ही पेशियाँ। पादप दो भिन्न प्रकार की गतियां प्रदर्शित करते हैं–

1 **वृद्धि से मुक्त गतियां**– यह गति छुई–मुई के पौधे (वह पौधा जिसकी पत्तियों छुने पर सिकुड़ जाती हैं) में होती हैं। अतः छुई–मुई में होने वाली इस गति को कंपानुकुंचन या स्पर्शानुकुंचन गति कहते हैं क्योंकि यह गति स्पर्श या कम्पन के कारण उत्पन्न होती हैं। इस गति का वृद्धि से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस गति में पादप फूलकर या सिकुडकर अपना आकार बदलते हैं।

2 **वृद्धि पर आश्रित गतियॉं**– कुछ पौधे जैसे मटर, लौकी आदि इस प्रकार की गति प्रदर्शित करते हैं। ये पौधे प्रतान (धागे के समान संरचना) की सहायता से दूसरे पौधे, बाड़ या अन्य कोई सहारा प्रदान करने वाली वस्तु पर चढ जाते हैं।

प्रतान स्पर्श के प्रति संवेदनशील होते है जब यह किसी आधार के सम्पर्क में आता है तो प्रतान का वह भाग जो आधार के सम्पर्क में है वह उतनी तेजी से वृद्वि नहीं करता जितना कि प्रतान का वह भाग जो वस्तु से दूर रहता है । इसी कारण प्रतान वस्तु को चारों ओर से जकड़ कर उसके लिपटता जाता हैं। यह गति दिशिक (निश्चित दिशा में) होती हैं।

अनुवर्तन गति– पौधों में उद्दीपन के कारण उसी दिशा या उसके विपरीत दिशा में होने वाली गति अनुवर्तन गति कहलाती है। पौधों में निम्न प्रकार की अनुवर्तन गतियां पायी जाती हैंः–

1– **प्रकाशानुवर्तन गति**– किसी पौधे का वृद्धि करता हुआ भाग प्रकाश के प्रति अनुवर्तन क्रिया प्रकट करता है जिसके कारण पौधा प्रकाश की दिशा में व जड प्रकाश की विपरीत दिशा मे वृद्धि करती है। इस प्रकार की गति को प्रकाशानुवर्तन गति कहते हैं। यह गति आक्सिन हार्मोन द्वारा नियंत्रित होती है।इस गति को हम निम्न उदाहरण व चित्र की सहायता से समझ सकते हैं।

2– **गुरूत्वानुवर्तन गति**– पौधे के किसी भाग का पृथ्वी के गुरूत्वाकर्षण बल की दिशा में या उसके विपरित दिशा में गति को गुरूत्वानुवर्तन कहते हैं। यही कारण हैं कि जड़ धनात्मक गुरूत्वानुवर्तन व तना ऋणात्मक गुरूत्वानुवर्तन गति करता हैं।

3–**जलानुवर्तन गति**– पौधें में नमी के कारण होने वाली गति को जलानुवर्तन गति कहते हैं। यह गति उच्च श्रेणी के पौधों की जड़ों, ब्रायोफाइटस की नमी मूल, मांस आदि में देखने को मिलती हैं।

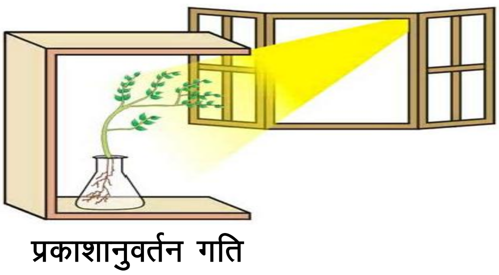

प्रकाशानुवर्तन गति

गुरूत्वानुवर्तन गति

4– **रसायनुवर्तन गति**– पौधे के कुछ भागों में रासायनिक उद्दीपनों के कारण गति (वृद्धि) होती है जिसे रसायनुवर्तन गति कहते हैं। उदाहरण– परागनली का वर्तिकाग्र से अण्डाशय की ओर वृद्धि कुछ रसायनों के कारण होती हैं।

<u>पादप हार्मोन</u> – पौधों में पाए जाने वाले विशेष प्रकार के रासायनिक पदार्थ जो पौधों की वृद्धि व विकास को नियन्त्रित करने का कार्य करते है उन्हे पादप हार्मोन कहते हैं। मुख्य पादप हार्मोन निम्न हार्मोन निम्न हैं–

1. ऑक्सीन हार्मोन 2. जिब्बेरेलिन 3. साइटोकाइनिन 4. एब्सिसिक अम्ल 5. एथिलिन

1– **ऑक्सीन हार्मोन**– यह पौधे के अग्र भाग में संश्लेषित होता हैं। यह वृद्धि हार्मोन है जो कायिक प्रजनन व कोशिकाओं की लम्बाई में वृद्धि करता हैं।

अन्य कार्य– 1. पतझड़ (पतो का गिरना) रोकना 2. फलों के गिरने से रोकना
3. शीर्षस्थ कलिका की प्रभाविता कम करना 4. अनिषेकफलन, अनिषेकजनन करना

2– **जिब्बेरेलिन–** यह वृद्धि हार्मोन है जो तने की लम्बाई बढता हैं व पुष्पन क्रिया को प्रेरित करता हैं।

अन्य कार्य–1. बौने पौधों की वृद्धि 2. बीज अकुरण

3–**साइटोकाइनिन हार्मोन–** यह हार्मोन उन भागों में संश्लेषित होता हैं जिनमें कोशिका विभाजन तेजी से होता हैं अतः यह हार्मोन फल व बीज में अधिक मिलता हैं।

कार्य– कोशिका विभाजन को प्रेरित करना।

4– **एब्बसिसिक अम्ल–** यह वृद्धि निरोधक (वृद्धि को रोकने वाला) हार्मोन है। इसे स्ट्रेस हार्मोन भी कहते हैं। इसे **संदमक हार्मोन** भी कहते हैं।

कार्य– 1. पत्तियों को मुरझाना। 2. पत्तियों में विलगन पैदा करना।
3. कोशिका विभाजन रोकना। 4. पुष्पन रोकना।

5– **एथिलिन–** यह गैसीय हार्मोन है इसका उपयोग कच्चे फलों को पकाने में किया जाता हैं।

<u>जन्तुओ में हार्मोन</u>–

अन्तः स्त्रावी ग्रंथिया या नलिका विहीन ग्रंथिया

<u>हार्मोन</u>– हमारे शरीर में पाई जाने वाली विशेष ग्रन्थियां जो विशेष प्रकार के रसायन स्त्रावित करती है उन्हें हार्मोन कहते हैं। तथा इन ग्रन्थियां को अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियां कहते हैं।

<u>तंत्रिका तथा हार्मोन क्रियाविधि की तुलना</u>

क्र.सं.	तंत्रिका क्रियाविधि	हार्मोन क्रियाविधि
1	यह नियन्त्रण एवं समन्वय से सम्बन्धित हैं।	यह नियंत्रण एवं समन्वय से संबंधित हैं।
2	यह तंत्रिकाओं द्वारा होती है ये तंत्रिकाएं शरीर में जाल बनाती हैं।	यह हार्मोन द्वारा होती हैं। इन हार्मोन का स्त्रवण अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियां से होता हैं।
3	यह तेज गति की क्रिया हैं।	यह मंद गति से होने वाली अभिक्रिया हैं।
4	तंत्रिका कोशिकाएं संवेदी अंगों से उद्दीपन प्राप्त कर मेरूरज्जु (मस्तिष्क) तक ले जाती हैं और वापस प्रेरणाओ के रूप में कार्यकारी अंगों तक जाते हैं।	हार्मोन अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियों से स्त्रावित होकर लक्ष्य कोशिकाओं में पहुॅचकर उनकी क्रियाओं को प्रवाहित करते हैं।

अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों को नलिका विहीन ग्रन्थियां भी कहते हैं क्योंकि यह हार्मोन (रसायन) बिना नलिका के सीधे ही रक्त में मिल जाते हैं।

प्रमुख अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियां, उनके कार्य, शरीर में स्थिति, स्त्रावित हार्मोन निम्न सारणी से समझ सकते हैं –

क्र. सं.	नाम	स्थान	हार्मोन	कार्य
1	पियुष (**मास्टर ग्रन्थि**)	मस्तिष्क के अधर तल पर	पिट्यूटराइन हार्मोन	1. शेष अन्तः स्त्रावी ग्रन्थियों पर नियंत्रण रखना। 2. कमी से शरीर बौना रह जाता हैं। 3. अधिकता से शरीर बड़ा हो जाता हैं।
2	थाइराइड (अवटु ग्रन्थि)	कण्ठ के पास (**H आकार** की होती हैं)	थाइरॉक्सिन हार्मोन (इस हार्मोन को बनने के लिए आयोडीन जरूरी)	1. शक्रता, प्रोटीन व वसा के उपापचय का नियंत्रण 2 कमी से **गलगंड (घेंघा/गॉयटर) रोग** हो जाता हैं। इस रोग में गला फूल जाता हैं। 3 आयोडीन युक्त नमक से इस रोग से बचा जा सकता है।
3	अग्न्याशय ग्रन्थि (**लैंगर हेन्स द्वीप**)	यकृत के पास	इन्सुलिन व ग्लुकागोन	1. रक्त में ग्लूकोज की मात्रा का नियंत्रण करना। 2. इन्सूलिन की कमी से **मधुमेह (डायबटीज)/ शुगर रोग** हो जाता हैं।
4	अधिवृक्क (एड्रिनल ग्रन्थि)	वृक्क के ऊपर	एड्रिनल हार्मोन (**करो या मरो हार्मोन**)	1. संकट कालीन परिस्थितियों का सामना करने को तैयार करता है।
5	वृषण (नर जनन ग्रन्थि)	वृषण कोष में	टेस्टोस्टेरोन हार्मोन	1. शुक्राणु निर्माण को प्रेरित करना। 2. गौण लैंगिक लक्षणों का नियन्त्रण।(दाढी मूंछ आना,आवाज भारी होना आदि)
6	अण्डाशय (मादा जनन ग्रन्थि)	गर्भाशय के पार्श्व में	एस्ट्रोजन, प्रोजेस्ट्रोन हार्मोन	1. अण्डाणु निर्माण को प्रेरित करना। 2गौण लैंगिक लक्षणों का नियन्त्रण। (आवाज पतली होना,स्तनग्रथियों का विकास)

जन्तुओं में रासायनिक समन्वय कैसे होता हैं–

रासायनिक समन्वय– जन्तुओं में अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियां मिलती हैं जिनसे एक प्रकार का रसायन निकलता है जिसे हार्मोन कहते है यह रक्त में मिलकर हमारे शरीर की विभिन्न क्रियाविधियों का नियन्त्रण करता हैं। इसे ही रासायनिक समन्वय कहते हैं।

जैसे– 1. पीयूष ग्रन्थि से निकला हार्मोन हमारे शरीर की वृद्वि को नियन्त्रित करता हैं।

2. अग्न्याशय ग्रन्थि से निकला हार्मोन रक्त में ग्लूकोज की मात्रा का नियन्त्रण करता हैं।

<u>शरीर में अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियो की स्थिति</u>

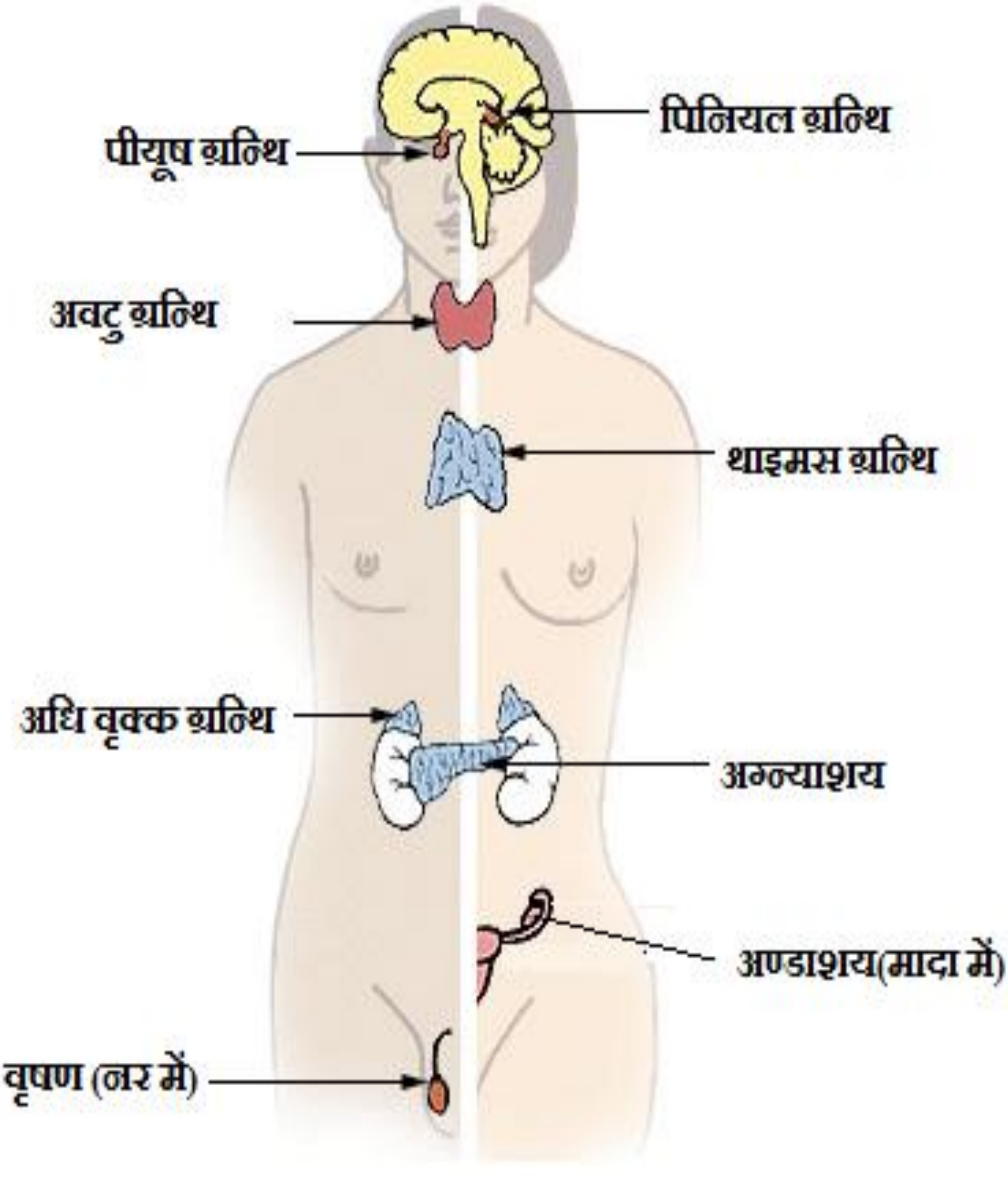

पाठ– 8 जीव जनन कैसे करते है

जनन /प्रजनन –वह क्रिया जिसके द्वारा सजीव अपने समान संतति उत्पन्न करता है वह जनन कहलाती है ।

जनन के प्रकार

कायिक जनन	**अलैंगिक जनन**	**लैंगिक जनन**
बीज के अतिरिक्त पौधे के कायिक भाग (जड,तना,पत्ती) से नये पौधे का बनना	एक ही जनक द्वारा सन्तान उत्पन्न करना	नर व मादा जनकों द्वारा सन्तान उत्पन्न करना
जड द्वारा –शीशम तने द्वारा–गन्ना,गुलाब पत्ती द्वारा–ब्रायोफिलम(पथरचट्टा)	विखण्डन–द्वि विखण्डन(अमीबा), बहुविखण्डन (प्लाज्मोडियम)	
	मुकुलन – हाइड्रा	
	पुनरूद्धभवन – प्लनेरिया	
	बीजाणु समासंघ– राइजोपस	

हमे विभिन्न जीव इसलिए दृष्टिगोचर होते है क्योकि वे जनन करते है , यदि वह जीव एकल होता तथा कोई भी जनन द्वारा अपने सदृश्य व्यष्टि उत्पन्न नहीं करता तो हमे उसके अस्तित्व का पता नहीं चलता । किसी स्पीशीज में पाये जाने वाले जीवों की विशाल संख्या ही हमे उसके अस्तित्व का ज्ञान कराती हैं। जनन की मूल घटना डीएनए(डीआक्सी राईबों न्युक्लिक अम्ल) की प्रति कृति बनाना है। डीएनए की प्रतिकृति बनाने के लिए कोशिकाएं विभिन्न रसायनिक क्रियाओं का उपयोग करती है । जनन कोशिकाओ में इस प्रकार डीएनए की दो प्रतिकृति बनती है । इसके साथ दूसरी कोशिकीय संरचनाओं का सृजन भी होता है। परिणामतः एक कोशिका विभाजित होकर दो कोशिकाएं बनती है।

विभिन्नता का महत्व –जनन के दौरान जनन कोशिकाओं के केन्द्रक में उपस्थित डीएनए में प्रतिकृति होती है। यह पूर्ण रूप से एक समान नहीं होने से विभिन्नाएं आती है यदि विभिन्नताओं की मात्रा अधिक हो तो यह जैव विकास का आधार बनती है।

एकल जीवों में प्रजनन की विधिया/अंलैगिक जनन –

1 **विखण्डन/द्विखण्डन** :–एक कोशिकीय जीव में कोशिका विभाजित या विखण्डन द्वारा नये जीव की उत्पति होती है इस प्रक्रियामें पूर्ण विकसित एक कोशिकीय जीव दो भागों में विभाजित हो जाता है।

उदाहरण –(1) **अमीबा –(इसमे** विभाजन किसी भी तल द्वारा हो सकता है)।

(2) कालाजार के रोगाणु, लेस्मानिया (इन जीवों में द्विखण्डन एक निर्धारित तल से होता है) ।

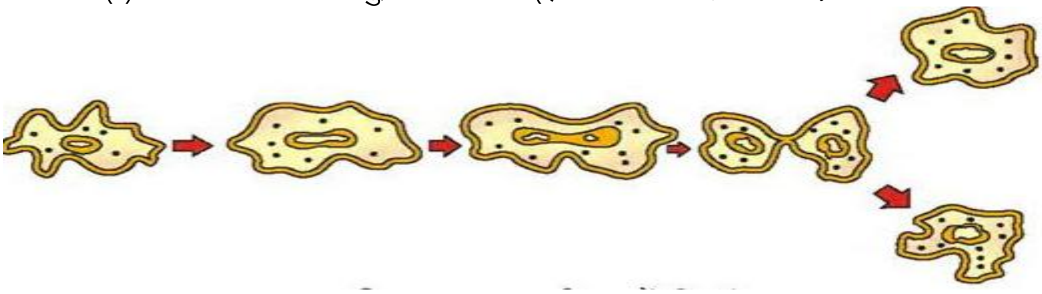

2 **बहुखण्डन** :– कुछ एक कोशिक जीव एक साथ अनेक संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाते है। जिसे बहुखण्डन कहते है। उदाहरण – मलेरिया परजीवी, प्लाज्मोडियम ।

3 **खण्डन** :– इस विधि में जीव विकसित होकर छोटे–छोटे टुकड़ों मं खंडित हों जाता है। ये टुकड़े या खण्ड वृद्धि कर नये संतति जीव मे विकसित हो जाते है। उदाहरण –स्पाइरोगायरा ।

4 पुनरुदभवन (पुनर्जनन) – कुछ सरल प्राणियों को यदि कई टुकड़ों में काट दिया जाए तो प्रत्येक टुकड़ा विकसित होकर पूर्ण जीव का निर्माण कर देता है। यह विधि पुनरुद्भवन या पुनर्जनन कहलाती है। उदाहरण – प्लेनेरिया ।

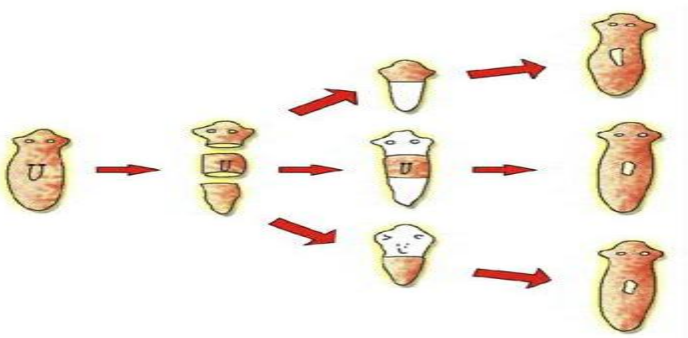

5 **मुकुलन** – यह अलैगिक जनन की एक विधि है जिसमें जनक जीव के शरीर के एक अंश में कोशिकाओं के नियमित विभाजन से वहां एक उभार विकसित हो जाता हैं । इस आभार को मुकुल कहते है ।यह

मुकुल वृद्धि करता है हुआ नन्हे जीव में बदल जाता है तथा पूर्ण विकसित होकर स्वतंत्र जीव बन जाता है। उदाहरण – हाईड्रा और यीस्ट

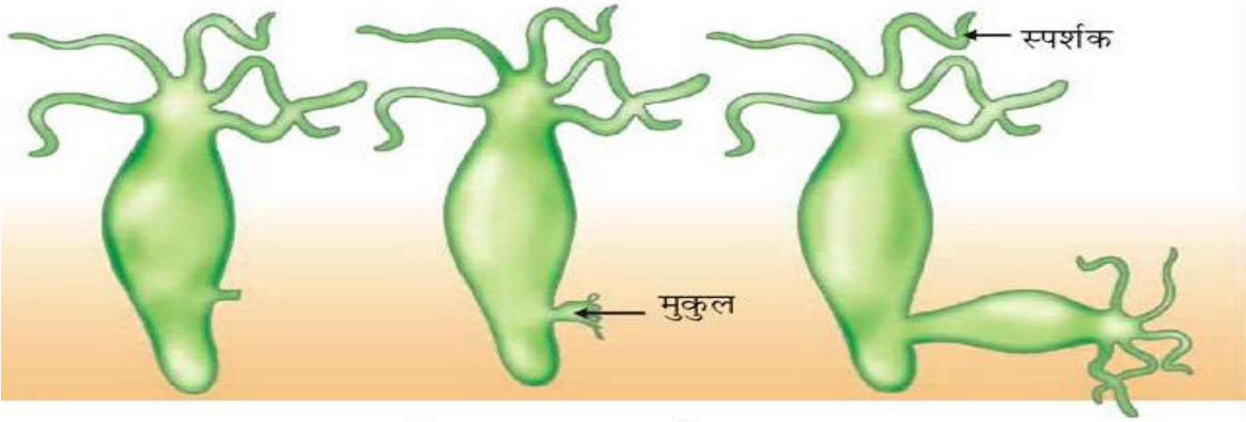

6 **कायिक प्रवर्धन –** जनन की जिस विधि में प्रजनन अंगो में सहायता के बिना पौघो के शरीर के अंश जैसे जड़ तना तथा पत्तियां उपयुक्त परिस्थियों में विकसित होकर नया पौधा उत्पन्न करते है उसे कायिक प्रवर्धन कहते है। उदाहरण – मनीप्लांट, आलू,केला , संतरा , गुलाब, चमेली, ब्रायोफिलम ।

कायिक प्रवर्धन के लाभ –

(1) गन्ना , गुलाब अथवा अंगूर की खेती में इस विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

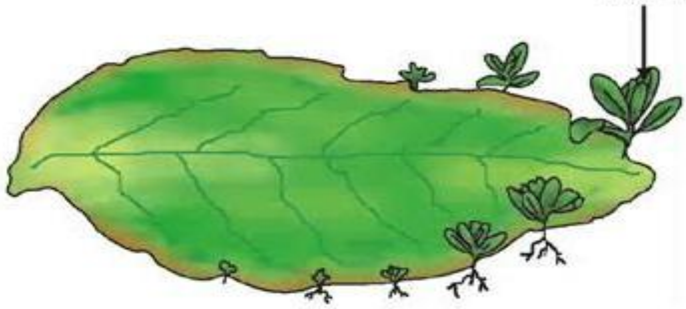

(2) यह पद्धति उन पौधो का उगाने के लिए उपयोगी है जो बीज उत्पन्न करने की क्षमता खो चुके है।

(3) कायिक प्रवर्घन द्वारा उत्पन्न सभी पौधे आनुवांशिक रूप से जनक पौधे के समान होते है।

7 **बीजाणु समासंध–** बासी ब्रेड पर धागे के समान पनपने वाली रचना राईजोपस की कुवक जाल होती है इसके प्रत्येक तंतु के ऊपरी भाग पर एक सुक्ष्म गोल संरचना होती है जिसे बीजाणुधानी कहते है । इसमें बीजाणु पाये जाते है। बीजाणु वृद्धि करने हेतु राईजोपस के नये जीव उत्पन्न करते है। बीजाणु चारों और एक मोटी भित्ति होती है जो प्रतिकूल परिस्थितियों में उसकी रक्षा करती है। नम सतह के सम्पक्र में आने पर वह वृद्धि करने लगते है।

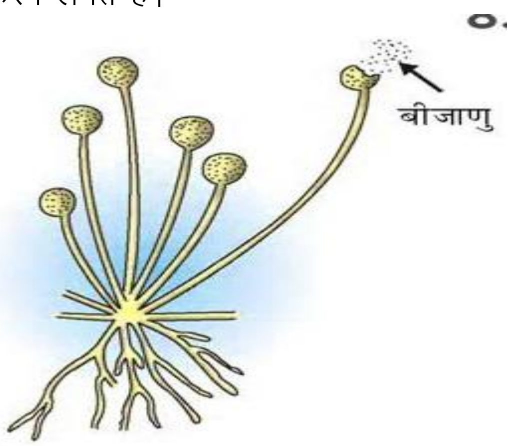

ऊतक सवंर्धन – पौधे एक शीर्ष भाग में वृद्धिशील हिस्से से पृथक किये गये ऊतक के एक छोटे से अंश को एक कृत्रिम पोषक माध्यम से वृद्धि करा करके एक नये पौधे के उत्पादन की तकनीक को ऊतक सवंर्धन कहते है । इस तकनीक का उपयोग सामान्यतः सजावटी पौधों के संवर्धन में किया जाता है

लैंगिक व अलैंगिक में अन्तर

	अलैंगिक जनन		लैंगिक जनन
1	यह क्रिया केवल एक प्राणी मे सम्पन होती है	1	इस क्रिया में नर व मादा भाग लेते है।
2	इसमे युग्मकों का निर्माण नहीं होता ।	2	इसमे युग्मकों का निर्माण(नर शुक्राणु व मादा अण्डाणु) होता ।
3	इसमे समसूत्री विभाजन होता है	3	इसमें समसूत्री के साथ साथ अर्धसूत्री विभाजन भी होता है
4	विधियां – विखण्डन, द्विखण्डन , बहुखण्डन पुनरुद्भवन, मुकुलन, कायिक प्रवर्धन बीजाणु समांसंध	4	विधि – निषेचन

नर युग्मक व मादा युग्मक में अन्तर

	नर युग्मक		मादा युग्मक
1	नर की जनन कोशिका को नर युग्मक या शुक्राणु कहते है	1	मादा की जनन कोशिका को मादा युग्मक या अण्डाणु कहते है ।
2	इसका निर्माण वृषण मे होता है।	2	इसका निर्माण अण्डाशय में होता है।
3	ये गतिशील होते है	3	ये गति नहीं करते है।
4	ये आकार में छोटे होते है।	4	ये आकार मे बड़े होते है।
5	इसमें भोजन का भण्डार नहीं होता है	5	इसमे भोजन का पर्याप्त मात्रा में भण्डार होता है।
6	शुक्राणुओ का निर्माण अधिक संख्या में होता है।	6	मनुष्य में प्रतिमाह केवल एक ही अण्डाणु का निर्माण होता है।

पुष्पी पौधो में लैंगिक जनन –

एक**लिंगी पुष्प –** जब पुष्प में पुंकेसर या स्त्री केसर में से कोई एक जननांग उपस्थित होता है पुष्प एकलिंगी कहलाते है। उदाहरण – पपीता, तरबूज ।

उभयलिंगी पुष्प – जब पुष्प में पुंकेसर एवं स्त्रीकेसर दोनो उपस्थित होते है तो ऐसे पुष्प उभयलिंगी पुष्प कहलाते है उदाहरण गुडहल, सरसो ।

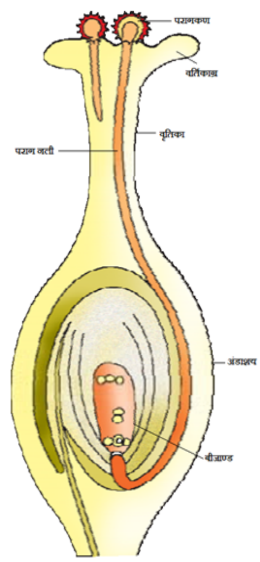

1 पौधो का जनन भाग पुष्प होता है ।

2 नर जननांग – पुकेसर – इसमें नर युग्मक –परागकण बनते है।

3 मादा जननांग – स्त्रीकेसर – इसमे अण्डाशय के बीजाण्ड मे अण्ड कोशिका – मादा युग्मक होती है।

4 परागण– परागकण का स्त्रीकेसर की वर्तिकाग्र पर पहुँचना , परागण कहलाता है। परागण दो प्रकार के होते है–

(1) स्वपरागण – अपने ही पुष्प की वर्तिकाग्र तक परागकणों का पहुंचना ।
(2) परपरागण – एक पुष्प के परागणों को दूसरे पुष्प की वर्तिकाग्र तक पहुंचना ।

5 परागकण का अंकुरण – वर्तिकाग्र पर परागकण से परागनली का निर्माण होता है जो कि वर्तिका से होती हुई अण्डाशय के बीजाण्ड में प्रवेश करती है

6 निषेचन – बीजाण्ड मे नर युग्मक व अण्डकोशिका के मिलने से निषेचन होता है जिससे युग्मनज बनता है जो बीज के रूप मे विकसित होता है ।
जबकि अण्डाशय फल में बदल जाता है ।
बीज में भावी पौधा या फूल होता है ।

7 अंकुंरण –बीज उपयुक्त परिस्थितियों में नवोदभिद में विकसित हो जाता है इस प्रक्रम को अंकुरण कहते है।

8 बीजपत्र के आधार पर पौधो का प्रकार :–
(1) एकबीजपत्री– मक्का,बाजरा (2) द्विबीजपत्री– चना,मटर,मूंगफली

मानव का लैंगिक जनन

यौवनारम्भ /किशोरावस्था – मनुष्य में जनन अंग 12 से 14 वर्ष के आसपास क्रियाशील हो जाते है । लैंगिक परिपक्वता के दौरान हार्मोनों में परिवर्तन होते है तथा इन हार्मोन के प्रभाव से द्वितीयक लैंगिक लक्षण प्रकट होते है। जो कि नर व मादा में भिन्न भिन्न होते है।

नर में द्वितीयक लैगिक लक्षण–

(1)त्वचा का तैलीय होना तथा कभी कभी मुहासें निकल आना ।
(2) हाथ पैर व चेहरे पर महीन रोमो का आना।
(3) बगलो तथा श्रोणि में बालों का आना।
(4) दाडी व मूंछ का आना ।
(5) आवाज भारी होना ।

मादा मे द्वितीयक लैगिक लक्षण –

(1)आवाज का बारीक होना
(2) रजोधर्म का आरम्भ होना
(3)स्तन ग्रन्थियो का विकास

नर जनन तंत्र – इसके निम्न भाग होते है ।
(1) वृषण (2) शुक्रवाहिनी(3) शुक्राशय(4) प्रोस्टेट ग्रन्थि (5) शिश्न

वर्णन – 1 वृषण कोष में एक जोड़ी दो वृषण होते है।
2 वृषण में नर युग्मक–शुक्राणुओ का निर्माण होता है ।
3 वृषण से शुक्रवाहिनी नली निकलती है जो शुक्राणुओं को शुक्राशय में पहुंचाती है।
4 शुक्राशय में शुक्राणु एकत्र होते है।
5 शुक्राशय मुत्र नलिका से जुड़ा रहता है जो कि नर इन्द्री(शिश्न) द्वारा बाहर खुलती है इस प्रकार शुक्रणु तथा मूत्र का त्याग नर में एक ही छिद्र द्वारा होता है।
6 जिस स्थान पर शुक्राशय मूत्र नलिका में खुलता है वहा पर एक ही जोड़ी प्रोस्टेट ग्रंथि पाई जाती है इनसे निकला स्त्राव शुक्राणुओ का पोषण करता है साथ ही उन्हे गति के लिए माध्यम उपलब्ध कराता है।
7 वृषण से नर जनन हार्मोन –टेस्टोस्टेरोन स्त्रावित होता है जो कि शुक्राणु निर्माण को प्रेरित करता है तथा द्वितीयक गौण लैगिक लक्षणों का नियंत्रण करता है।

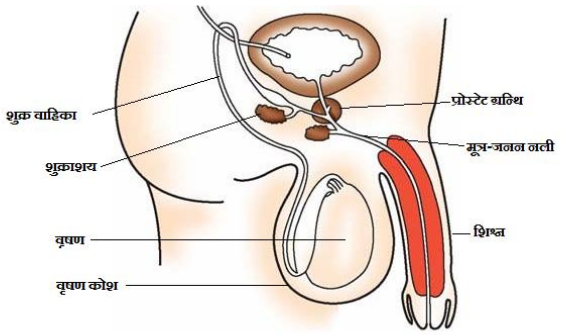

नर जनन तंत्र

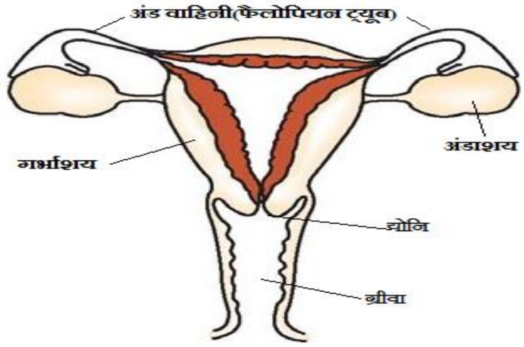

मादा जनन तंत्र

मादा जनन तंत्र – इसके निम्न भाग होते है । (1) अण्डाशय (2) अण्डवाहिनी (3) गर्भाशय (4) योनी

वर्णन – 1 मादा की उदर गुहिका में एक जोड़ी अण्डाशय पाये जाते है।
2 अण्डाशय मे मादा युग्मक–अण्डाणु का निर्माण होता है।
3 अण्डाशय से अंडवाहिनी नली निकलती है जो कि गर्भाशय में खुलती है।
4 गर्भाशय में भ्रुण का विकास होता है।
5 गर्भाशय योनी मार्ग द्वारा बाहर खुलता है। गर्भाशय में भ्रुण अपरा (प्लेसेन्टा) द्वारा माता के गर्भाशय से जुड़ा रहता है इसी से पोषण श्वसन,उत्सर्जन व रक्त प्राप्त करता है।
6 अण्ड वाहिनी में अण्डाणु का शुक्राणु द्वारा निषेचन होता है युग्मनज का निर्माण होता है।
7 अण्डाशय से मादा जनन हार्मोन – ऐस्ट्रोजन स्रावित होता है जो कि अण्डाणु निर्माण को प्रेरित करता है। तथा द्वितीयक गौण लैगिंक लक्षणों का नियन्त्रण करता है।

निषेचन – नर युग्मक (शुक्राण) तथा मादा युग्मक (अण्डाणु) के संलयन की क्रिया को निषेचन कहते है। मैथुन के समय शुक्राणु योनी मार्ग मे स्थापित होते है। जहां से ऊपर की ओर गति करके अण्डवाहिनी तक पहुच जाते है जहां अण्ड कोशिका में मिल सकते है । निषेचन के बाद निषेचित अण्ड या युग्मनज गर्भाशय में स्थापित हो जाता है । और विभाजित होने लगता है ।

गर्भावधि– मां के शरीर मे गर्भ को विकसित होने में लगभग 9 मास का समय लगता है।जिसे गर्भावधि कहते है।

प्रसव– मां के शरीर से शिशु का बाहर आना प्रसव कहलाता है। गर्भाशय की पेशियो के लयबद्ध संकुचन से शिशु का जन्म होता है।

क्या होता है जब अण्ड का निषेचन नहीं होता – (ऋतु स्त्राव /रजोधर्म)– यदि अण्ड का निषेचन नहीं होता तो उस स्थिति में गर्भाशय की आंतरिक भित्ति जो कि गर्भ धारण के लिए तैयार हुई थी वह टूट कर रक्त स्त्राव के रूप में योनी मार्ग द्वारा बाहर निकलती है इस प्रक्रियाको ऋतु स्त्राव /रजोधर्म/मासिक धर्म कहते है।

जनन **स्वास्थ्य –** लैगिक क्रियाओ के स्वास्थ्य पर पडने वाले विपरीत प्रभाव से बचने हेतु जनन स्वास्थ्य आवश्यक है।

गर्भधारण को रोकने के उपाय – यांत्रिक अवरोध –(अ) निरोध (ब) कॉपर टी

रसायनिक युक्तियां (अ) स्त्रियों द्वारा गोलियों का सेवन जो हार्मोन संकुलन में परिवर्तन कर देती है। जिससे अण्ड कोशिका का उत्सर्जन ही नहीं होता है।

शल्य क्रियाविधि – वैसेक्टोमी – पुरूष की शुक्रवाहिनी को अवरूद्ध करना ।

ट्युबेक्टोमी– स्त्री का अण्डवाहिनी को अवरूद्ध करना ।

यौन संचरित रोग (एसटीडी**)– ऐसे रोग जो यौन सम्पर्क द्वारा फैलते है।**

जीवाणु जनित यौन संक्रमित रोग – सिफलिस,गोनेरिया

वाइरस जनित यौन संक्रमित रोग – एड्स,मस्सा

आनुवंशिकता एंव जैव विकास

विभिन्नताः– एक ही स्पीशीज के सदस्यों या सन्तान का माता पिता से असमानता या विभिन्न लक्षणों का प्रदर्शन विभिन्नता कहलाता है।

विभिन्नता का महत्वः–

1.जन्तुओं व पादपो में लाभदायक परिवर्तन।

2.जीवो की जीवित रहने की क्षमता में वृद्धि।

3.जैव विकास प्रक्रम में सहायक।

आनुवंशिक लक्षणः– वे लक्षण जो जनक से सन्तति मे स्थानान्तरित होते हैं।

आनुवंशिकताः– जनक से सन्तति में गुणों एंव लक्षणों का स्थानान्तरण।

आनुवांशिकीः– विज्ञान की एक शाखा जिसमे आनुवंशिकता संबन्धित नियम का अध्ययन किया जाता है।

ग्रेगर जॉन मेंडलः–इन्हे आनुवंशिकी का जनक कहा जाता है। मेंडल ने अपने गणितीय ज्ञान एंव विज्ञान को मिलाकर मटर एंव अन्य जीवों के वंशागत गुणों का अध्ययन किया एंव वंशागति के नियम बनाए।

मेंडल का प्रयोगों के लिए चयनित मटर के पौधे के प्रमुख लक्षणः–

पादप का लक्षण	प्रभावी लक्षण	अप्रभावी लक्षण
1.पादप की लम्बाई	लम्बा	बौना
2.पुष्प की स्थिति	अक्षीय	शीर्ष
3.पुष्प का रंग	बैगनी	सफेद
4.फली की आकृति	फूली हुई	पिचकी हुई
5.फली का रंग	हरा	पीला
6.बीज की आकृती	गोल	झुर्रीदार
7.बीज का रंग	पीला	हरा

संकरण प्रयोगों के लिए मटर पौधे का चुनावः–

मटर के पौधे का चुनाव निम्न कारणों से हुआ–

1.मटर एकवर्षीय पादप है।

2.मटर के पादप का आकार छोटा होता है।

3.मटर मे बीजों की संख्या अधिक होती है।

4.मटर द्विलिंगी पादप है,स्वपरागण पाया जाता है।

5.मटर के पुष्पों में पर परागण आसानी से होता है।

6.मटर के पौधों में कई लक्षण विपरीत प्रभाव दर्शाते है।

मेंडल के प्रयोगः–

एक संकर संकरणः– एक जोडी विपर्यासी लक्षणों को ध्यान में रखकर किया गया संकरण जैसेः– पादप की लम्बाई – लम्बा व बौना मेंडल ने शुद्ध लम्बे व शुद्ध बौने मटर के पौधे का चयन कर संकरण कराया।

शुद्ध लम्बे TT   शुद्ध बौने tt   युग्मकारक

इनके संकरण से प्राप्त F_1 पीढी के सभी पादप लम्बे थे जो लक्षण प्रकट नहीं हुए वे अप्रभावी लक्षण कहलाये।जो लक्षण प्रकट हुए वे प्रभावी कारक कहलाये। यहां लम्बेपन का लक्षण प्रभावी व बौनेपन का लक्षण अप्रभावी है। पीढी की सभी संततियां विषमयुग्मनजी(Tt)होती हैं।

मेंडल ने F_1पीढी की संततियों के बीच क्रास कराया और द्वितीय पीढी F_2प्राप्त की । F_2मे दोनो प्रकार के पादप उत्पन्न हुए । F_2पीढी में लक्षण प्ररूप (फिनोटाइप) अनुपात 3:1है,और जीन अनुसार अनुपात 1:2:1(जीन प्ररूप / जीनो टाइप)है।

एक संकर संकरण–

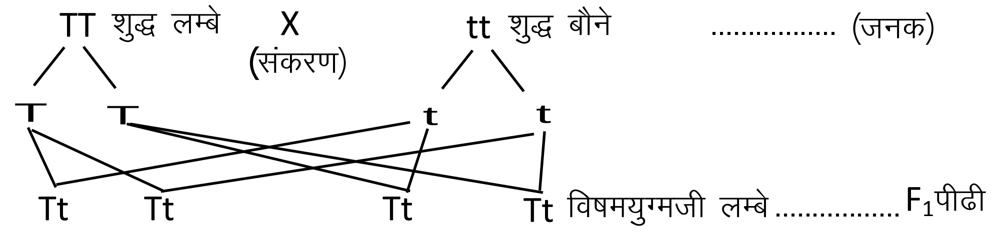

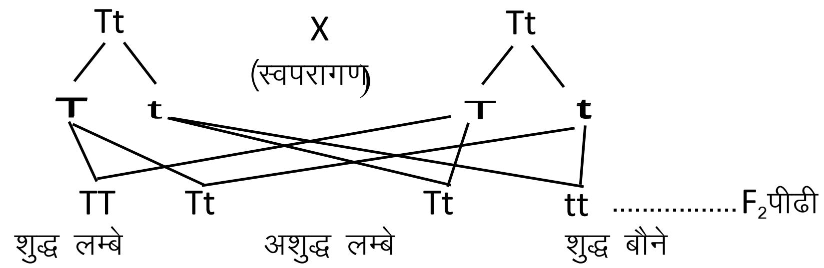

F_2	T	t
T	TT	T t
t	T t	t t

परिणांम – प्रयोगो के आधार पर दो नियम दिये गये–

1.प्रभाविता का नियम– एक जोडी विपर्यासी लक्षण वाले पौधों का संकरण कराने पर F_1पीढी में एक लक्षण ही प्रकट होता है उसे प्रभावी लक्षण कहते है यह प्रभाविता का नियम है।

2.पृथक्करण अथवा युग्मको की शुद्धता का नियमः– F_2पीढी में दोनो लक्षण प्रकट होते है। जनन के दौरान युग्माकों के बनने के समय एक–दूसरे से पृथक होना पृथक्करण कहलाता है।

संकर संतति विषमयुग्मनजी होती है,इसमें कारक युग्म के दोनो कारक साथ–साथ रहते है लेकिन युग्मक निर्माण के समय एक युग्मक में एक ही कारक युग्म उपस्थित होता है इसलिए इसे युग्मको की शुद्धता का नियम भी कहते है।

द्विसंकर संकरणः– दो जोडी विपर्यासी लक्षणों को ध्यान में रखकर किया गया संकरण द्विसंकर संकरण कहलाता है, जैसे– बीज का आकार और बीज का रंग।

मेंडल ने मटर के शुद्ध गोल एंव पीले बीज वाले पादपों का संकरण शुद्ध झुर्रीदार व हरे बीज वाले पादपों से करवाया F_1पीढी में गोल एंव पीले बीज वाले पादप प्राप्त हुए,अर्थात गोल एंव पीले बीज का कारक प्रभावी एंव झुर्रीदार तथा हरा कारक अप्रभावी था।

F_1पीढी के पादपों में स्वपरागण कराकर F_2पीढी प्राप्त की । F_1पीढी के पादपों कें उपर्युक्त चारो कारक F_2पीढी में स्वतत्र रूप से प्रकट हुए अर्थात इनके बीज गोल–पीले,गोल–हरे,झुर्रीदार–पीले, झुर्रीदार– हरे प्रकार के थे।

F_2पीढी के पादपों में लक्षण अनुसार अनुपात 9:3:3:1 प्राप्त हुआ इसे ही द्विसंकर अनुपात कहते है। इसका जीन अनुसार अनुपात 1:2:2:4:1:2:1:2:1 प्राप्त हुआ।

द्विसंकर संकरण

RRYY x rryy

शुद्ध गोल–पीले शुद्ध झुर्रीदार–हरे

RrYy विषमयुग्मजी गोल–पीले .... F_1पीढी

स्वपरागण	RY	Ry	rY	ry
RY	RRYY	RRYy	RrYY	RrYy
Ry	RRYy	RRyy	RrYy	Rryy
rY	RrYY	RrYy	rrYY	rrYy
Ry	RrYy	Rryy	rrYy	rryy

परिणामः–

स्वतंत्र अपव्यूहन का नियमः–दो या दो से अधिक जोडी विपर्यासी लक्षणों वाले जनको के मध्य क्रास करवाया जाता है तो सभी लक्षण स्वतंत्र रूप से प्रकट होते है। एक लक्षण की वंशागति पर दूसरे लक्षण की उपस्थिति का कोई प्रभाव नहीं पडता है।

लक्षणों की अभिव्यक्ति व नियंत्रणः– मानव में प्रत्येक लक्षण उसके माता पिता के डी एन ए से प्रभावित होते है अतः प्रत्येक लक्षण के लिए प्रत्येक संतति मे दो विकल्प होते है।

कोशिका के डी एन ए में प्रोटीन संश्लेषण के लिए एक सूचना होती है जिसे उस प्रोटीन का जीन कहते है,प्रोटीन विभिन्न लक्षणों की अभिव्यक्ति को नियंत्रित करता है।

उदाहरणः– पौधो में कुछ हार्मोन होते है जो पौधे की लम्बाई का नियंत्रण करते है यदि एजाइम दक्षता से कार्य करे तो हार्मोन पर्याप्त मात्रा में बनेगा ,जीन लक्षणों का नियंत्रण करते है।

लिंग निर्धारण'–मानव में लिंग निर्धारण आनुवंशिक आधार पर होता है। मनुष्य की प्रत्येक कोशिका में 46 गुणसूत्र होते हैं। 46 गुणसूत्र में से 44(22जोडे) कायिक गुणसूत्र व 2 गुणसूत्र लिग गुणसूत्र कहलाते है मादा मे दोनो लिंग गणसूत्र XX होते है ,नर में एक लिंग गुणसूत्र छोटा Y व दूसरा X गुणसूत्र होता है।नर के लिंग गुणसूत्र XY होते हैं।

अर्द्धसूत्री विभाजन के फलस्वरूप नर तथा मादा युग्मक बनते हैं सभी मादा युग्मकों में X गुणसूत्र होता है।नर में दो प्रकार के युग्मक होते है X गुणसूत्र वाले Y गुणसूत्र वाले ।

जब X गुणसूत्र वाली अंडकोशिका X गुणसूत्र वाले शुक्राणु से निषेचित होती है युग्मनज में XX गुणसूत्र होंगे और यह मादा संतती को जन्म देगा।अगर X गुणसूत्र वाली अंड कोशिका से Y गुणसूत्र वाला शुक्राणु मिलता है तो XY युग्मक होगा जो नर संतति को जन्म देगा।

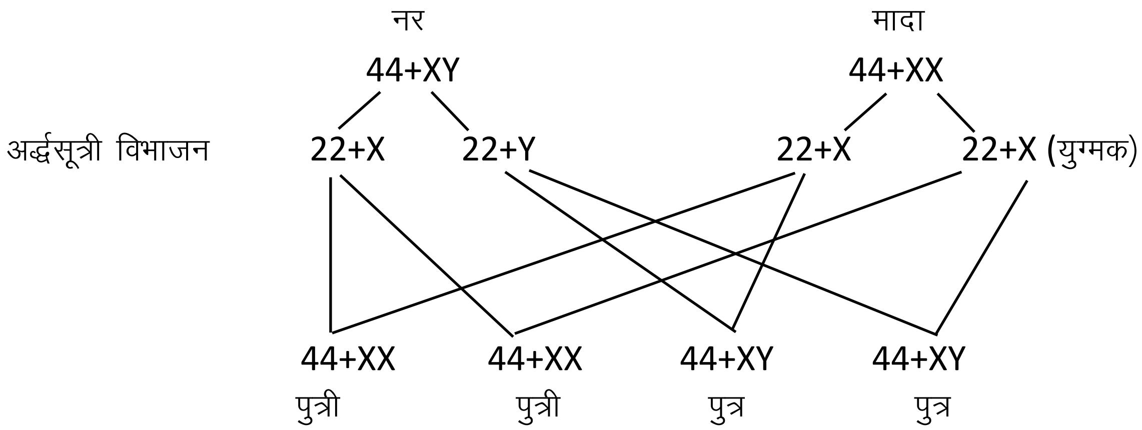

उपार्जित लक्षणः– वे लक्षण जो किसी एकल जीव द्वारा अपने जीवन काल में प्राप्त किये जाते है और जनन कोशिकाओ में घटित नहीं होत है।

जैसेः– शरीर का बढना तथा किसी अंग का नष्ट होना।

जाति उद्भवः– किसी जाति (स्पीशीज) से नई जाति का उत्पन्न होना जाति उद्भव कहलाता है।

इसके निम्न कारण हो सकते हैः–

1.उत्परिवर्तन :–जीवो में होने वाले अकस्मात परिवर्तन जो कि वंशानुगत होते है उत्परिवर्तन कहलाते है।

2.प्राकृतिक चयन द्वाराः– प्राकृति आपदा या वातावरणीय कारकों की विषमताओं के कारण स्पीशीज के कुछ सदस्यो के अंदर विशिष्ट लक्षण उत्पन्न हो जाते जो उन्हे उस विशेष परिस्थिति में अपने अस्तित्व को बचाने में सहायक होते है ये अनुकूलन कहलाते है। सबसे अधिक अनुकूलित सदस्य जीवित रहने में सक्षम होगे और एक नई जाति को उत्पन्न करने में सक्षम होंगे।

3.भौगोलिक पृथ्क्करण द्वाराः– आबादी के विस्तार और भौगोलिक कारणों से यह आबादी विभिन्न क्षेत्रो में बंट जाती है इसे भौगोलिक पृथक्करण कहते है।

अभिलक्षण :– बाह्य आकृति अथवा व्यवहार का विवरण अभिलक्षण कहलाता है।

जैसे :– सरल संरचना वाले जीवो से जटिल संरचना वाले जीवों के विकास को जैव विकास कहते है।

दो स्पीशीज के मध्य जितने अधिक लक्षण समान होंगे उनका संबध भी उतना ही निकट का होगा। जीवो तथा स्पीशीज के वर्गीकरण से उनका विकास प्रदर्शित होता है।

जैव विकास के पक्ष मे प्रमाणः—

1.समजात अंग

2.समवृत्ति अंग(समरूप अंग)

3.विलुप्त जीवाश्म

समजात अंग	समवृत्ति अंग
वे अंग जिनकी संरचना एंव उत्पत्ति समान हो लेकिन कार्य भिन्न हो समजात अंग कहलाते है जैसेः— चमगादड के पंख उडने के लिये घोडे के अग्रपाद दौडने के लिए।	वे अंग जिनके बाह्य आकार तथा कार्यो में समानता होती है लेकिन संरचना तथा मूल उत्पत्ति अलग—अलग होती है। जैसेः— पक्षियो व कीटो के पंख।

जीवाश्म :—

पृथ्वी के गर्भ में लाखों करोडो वर्ष पूर्व के प्राणियो तथा पादपों की सुरक्षित छाप को जीवाश्म कहते है।

जीवाश्म की उम्र का आकलनः—

1.पृथ्वी की विभिन्न परतो में जीवाश्म की सापेक्ष स्थितिः—पृथ्वी की ऊपरी परत में पाये जाने वाले जीवाश्म पृथ्वी की निचली परत में पाये जाने वाले जीवाश्म की अपेक्षा नये होते है।

फोसिल डेटिंगः— इस विधी में रेडियोधर्मी तत्वो के विघटन के आधार पर जीवाश्म की उम्र का आकलन किया जाता है।

विकास के चरणः— कोई परिवर्तन या विकास केवल डी एन ए में त्रुटि या विभिन्नता द्वारा नहीं होता बल्कि यह कई कई पीढियों मे निरन्तर एंव क्रमिक परिवर्तन द्वारा विकसित रूप में पहुंचता है।

उदाहरणः— 1.सरीसृप वर्ग के कुछ डायनोसोर मे भी पंख थे लेकिन विशाल काय होने के कारण उड नहीं सकते थे लेकिन पक्षियो ने परो(पंखो) का उपयोग उडने के लिए किया इससे स्पष्ट होता है कि सरीसृप व पक्षियो में बहुत निकटता है।

2.लगभग दो हजार वर्ष पूर्व मनुष्य जंगली गोभी को एक खाद्य पादप के रूप में उगाता रहा है। जंगली गोभी से ही मनुष्य ने चयन द्वारा विभिन्न सब्जियो को विकसित किया है। यह एक कृत्रिम चयन था।कुछ किसान चाहते थे कि इसकी पत्तियां पास—पास हो। फलस्वरूप पत्तागोभी का विकास हुआ।कुछ पुष्प की ऊचाँई को रोकना चाहते थे अतः फूलगोभी विकसित हुई।कुछ ने फूले तने का उपयोग किया जिससे गांठगोभी विकसित हुई। कुछ ने इसकी चौडी पत्तियों का चयन करके केल नामक सब्जी विकसित की।

पाठ–10

प्रकाश परावर्तन तथा अपवर्तन

<u>प्रकाश का परावर्तन</u> – दर्पण अपने पर पडने वाले अधिकांश प्रकाश को परावर्तित कर देता है, इस क्रिया को प्रकाश का परार्वतन कहते है।

<u>प्रकाश परार्वतन के नियम –</u>

(1) आपतन कोण का मान परावर्तन कोण के बराबर होता है।

(2) आपतित किरण, परावर्तित किरण व अभिलम्ब एक ही तल में उपस्थित होते है।

दर्पण : एक चिकनी व चमकिली सतह जो प्रकाश का परार्वतन कर सके, दर्पण कहलाती है। दर्पण दो प्रकार के होते है। 1 समतल दर्पण 2 गोलीय दर्पण

1 **समतल दर्पण** : वे दर्पण जिनकी परावर्तन करने वाली सतह समतल हो समतल दर्पण कहलाते है।

समतल दर्पण से बने प्रतिबिंब की विशेषता :

1 समतल दर्पण द्वारा बना प्रतिबिंब सदैव आभासी तथा सीधा होता है।

2 प्रतिबिंब का साइज बिंब के साइज के बराबर होता है।

3 प्रतिबिंब तथा बिंब की दर्पण से समान दूरी होती है।

4 प्रतिबिंब पार्श्व परिवर्तित होता है।

(a) अवतल दर्पण (b) उत्तल दर्पण

2 **गोलीय दर्पण :**

वे दर्पण जिनका परावर्तक पृष्ठ अंदर या बाहर की ओर वक्रित हो सकता है, गोलीय दर्पण कहलाते है। गोलीय दर्पण दो प्रकार के होते है।

(1) **अवतल दर्पण :**

वह गोलीय दर्पण जिसका परावर्तक पृष्ठ अंदर की ओर वक्रित हो, अवतल दर्पण कहलाता है।

(2) **उत्तल दर्पण :**

वह गोलीय दर्पण जिसका परावर्तक पृष्ठ बाहर की ओर वक्रित हो, उत्तल दर्पण कहलाता है।

मुख्य परिभाषाएँ :

1 **वक्रता केन्द्र :**दर्पण जिस खोखले गोले का भाग होता है, उस गोले का केन्द्र वक्रता केन्द्र कहलाता है। इसे C से निरूपित किया जाता है।

2 **ध्रुव :**गोलीय दर्पण के परावर्तक पृष्ठ के कन्द्र को दर्पण का ध्रुव कहते है।इसे P से निरूपित करते है ।

3 **वक्रता त्रिज्या :** गोलीय दर्पण का परावर्ततक पृष्ठ जिस गोले का भाग है उसकी त्रिज्या दर्पण की वक्रता त्रिज्या कहलाती है। इसे R से निरूपित किया जाता है।

4 **मुख्य अक्ष :** गोलीय दर्पण के ध्रुव व वक्रता त्रिज्या से गुजरने वाली सीधी काल्पनिक रेखा दर्पण का मुख्य अक्ष कहलाती है।

5 **मुख्य फोकस** : गोलीय दर्पण पर मख्य अक्ष के समांतर आपतित किरणे परावर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के जिस बिंदू पर मिलती है या मिलती हुई प्रतीत होती है दर्पण का फोकस बिंदू कहलाता है। इसे F से निरूपित किया जाता है।

6 **फोकस दूरी** : गोलीय दर्पण के ध्रुव तथा मुख्य फोकस के बीच की दूरी फोकस दूरी कहलाती है। इसे f द्वारा निरूपित करते है।

वक्रता त्रिज्या फोकस दूरी से दो गुनी होती है।

$$R=2f$$

गोलीय तल से परावर्तन के नियम :–

1 दर्पण के मुख्य अक्ष के समांतर आपतित प्रकाश किरण, परावर्तन के पश्चात् अवतल दर्पण के मुख्य फोकस से गुजरेगी अथवा उत्तल दर्पण के मुख्य फोकस से अपसरित होती हुई प्रतीत होगी।

2 अवतल दर्पण के मुख्य फोकस से गुजरने वाली किरण अथवा उत्तल दर्पण के मुख्य फोकस की ओर निर्देशित किरण परावर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के समांतर निकलेगी।

3 अवतल दर्पण के वक्रता केन्द्र से गुजरने वाली किरण अथवा उत्तल दर्पण के वक्रता केन्द्र कि ओर निर्देशित किरण, परावर्तन के पश्चात् पथ के अनुदिश वापस परावर्तित हो जाती है।

4 अवतल अथवा उत्तल दर्पण के ध्रुव की ओर मुख्य अक्ष से तिरछी दिशा में आपतित किरण, तिरछी दिशा में ही परावर्तित होती है। आपतित तथा परावर्तित किरणे ध्रुव पर मुख्य अक्ष से समान कोण बनाती है।

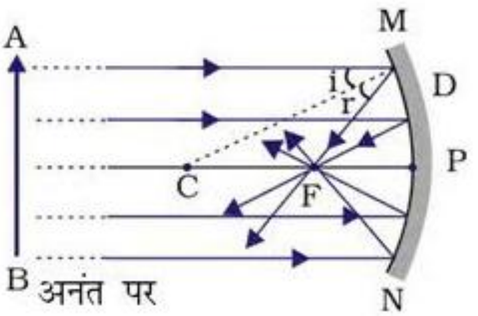

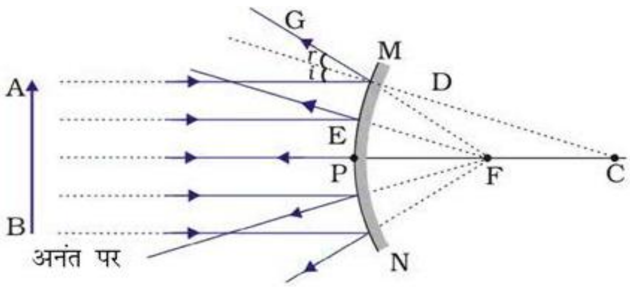

अवतल दर्पण द्वारा प्रतिबिंब निर्माण :–

बिंब की स्थिति	प्रतिबिंब की स्थिति	प्रतिबिंब का साइज़	प्रतिबिंब की प्रकृति
अनंत पर	फोकस F पर	अत्यधिक छोटा, बिंदु साइज़	वास्तविक एवं उलटा
C से परे	F तथा C के बीच	छोटा	वास्तविक तथा उलटा
C पर	C पर	समान साइज़	वास्तविक तथा उलटा
C तथा F के बीच	C से परे	विवर्धित (बड़ा)	वास्तविक तथा उलटा
F पर	अनंत पर	अत्यधिक विवर्धित	वास्तविक तथा उलटा
P तथा F के बीच	दर्पण के पीछे	विवर्धित (बड़ा)	आभासी तथा सीधा

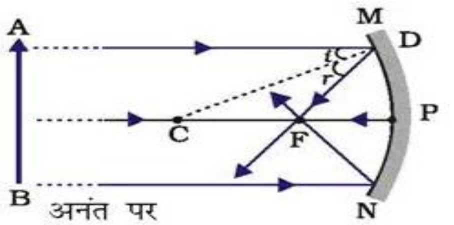

(a)

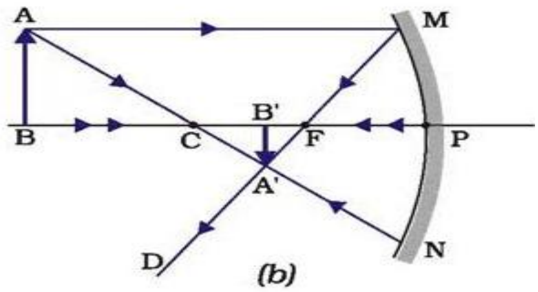

(b)

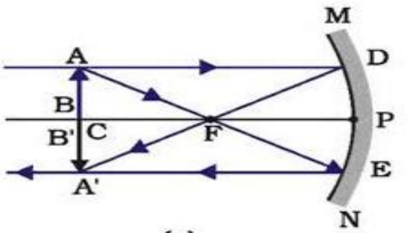

(c)

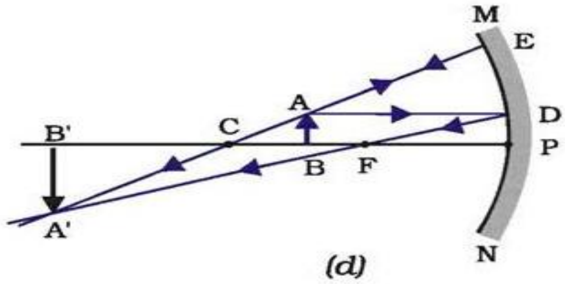

(d)

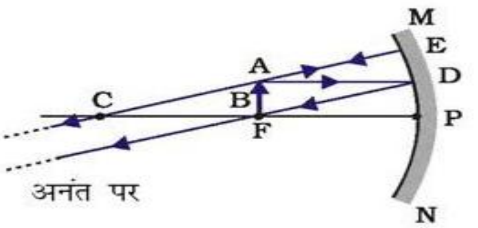

(e)

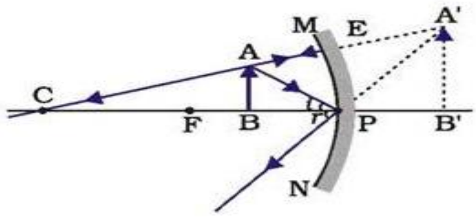

(f)

अवतल दर्पण के उपयोग

1 टार्च, सर्चलाइट तथा वाहनों के अग्रदीपों में

2. शेंविग दर्पणों में

3 दंत नाक–कान–गला विशेषज्ञों द्वारा

4 सौर भटि्टयों में

उत्तल दर्पण द्वारा प्रतिबिंब निर्माण : उत्तल दर्पण से सदैव सीधा, छोटा व आभासी प्रतिबिम्ब बनता है। प्रतिबिंब सदैव फोकस व दर्पण के मध्य स्थित होता है। (अनन्त को छोडकर)

बिंब की स्थिति	प्रतिबिंब की स्थिति	प्रतिबिंब का साइज	प्रतिबिंब की प्रकृति
अनंत पर	फोकस F पर दर्पण के पीछे	अत्यधिक छोटा, बिंदु के साइज़ का	आभासी तथा सीधा
अनंत तथा दर्पण के ध्रुव P के बीच	P तथा F के बीच दर्पण के पीछे	छोटा	आभासी तथा सीधा

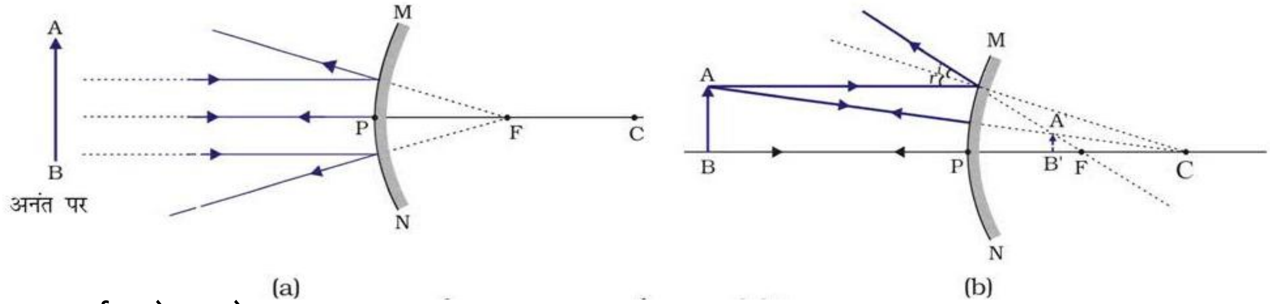

(a) (b)

उत्तल दर्पण के उपयोग :

1 वाहनों के पश्च दृश्य दर्पणों के रूप में।

2 प्रकाश को फैलाने में।

अवतल व उत्तल दर्पण में अन्तर

अवतल दर्पण	उत्तल दर्पण
1 इस दर्पण का परावर्तक पृष्ठ अंदर की ओर वक्रित होता है।	1 इस दर्पण का परावर्तक पृष्ठ बाहर की ओर वक्रीत होता है।
2 यह आपतित प्रकाश को परार्वतन के पश्चात् एक बिन्दु पर केन्द्रित करता है।	2 यह आपतित प्रकाश को फैला देता है।
3 इससे वास्तविक अथवा आभासी प्रतिबिंब बनते है ।	3 यह केवल सीधा एंव आभासी प्रतिबिंब बनाता है।
4 अवतल दर्पण द्वारा बिंब से छोटे बराबर तथा बडे प्रतिबिंब बनते है।	4 यह सदैव बिंब से छोटा प्रतिबिंब बनाता है।

वास्तविक व आभासी प्रतिबिंब में अन्तर

वास्तविक प्रतिबिंब	आभासी प्रतिबिंब
1 इन्हे पर्दे पर प्राप्त किया जा सकता है।	1 इन्हे पर्दे पर प्राप्त नहीं किया जा सकता है
2 यह सदैव उल्टे होते है।	2 यह सदैव सीधे होते है।
3 यह दर्पण के आगे बनते है।	3 यह दर्पण के पीछे बनते है।
4 यह प्रतिबिंब प्रकाश किरणों के किसी बिन्दु पर वास्तविक रूप में मिलने से प्राप्त होते है।	4 यह प्रतिबिंब प्रकाश किरणों के किसी बिंब पर आभासी रूप से मिलने से प्राप्त होते है।

गोलीय दर्पणों द्वारा परावर्तन के लिये चिन्ह परिपाटी

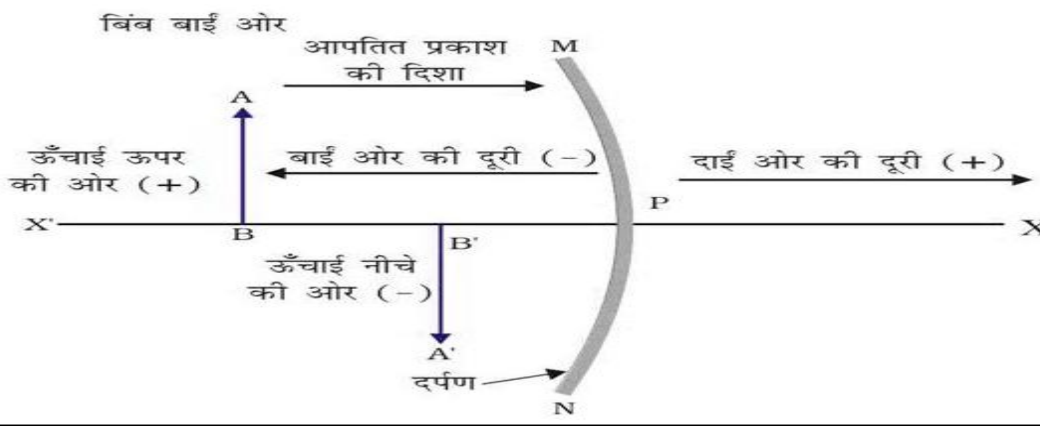

राशि	अवतल दर्पण	अवतल लैंस	उत्तल दर्पण	उत्तल लैंस
बिंब की ध्रुव से दूरी (u)	-ve	-ve	-ve	-ve
प्रतिबिंब की ध्रुव से दूरी (v)	-ve +ve (आभासी)	-ve	+ve	+ve -ve (आभासी)
फोकस से दूरी (f)	-ve	-ve	+ve	+ve

दर्पण सूत्र	आवर्धन सूत्र
$$\frac{1}{v} + \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$$ बिंब की ध्रुव से दूरी = u प्रतिबिंब की ध्रुव से दूरी = v फोकस से दूरी =f	आवर्धन(**m**)= $\frac{\text{प्रतिबिम्ब की ऊँचाई (h')}}{\text{बिम्ब की ऊँचाई (h)}}$ आवर्धन(**m**)= $\frac{h'}{h} = -\frac{v}{u}$

छात्र द्वारा याद करने हेतु ट्रिकः–

$\frac{1}{v} \pm \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$ Darpan सूत्र हेतु डी यानि धन (+) लेंस सूत्र हेतुः– लेंस यानि लेस (-)

प्रकाश का अपवर्तन : जब प्रकाश किरण एक पारदर्शी माध्यम से दूसरे पारदर्शी माध्यम में प्रवेश करती है तो दोनो माध्यमों को पृथक करने वाले तल पर अपने मार्ग से विचलित हो जाती है। इस घटना को प्रकाश का अपवर्तन कहते है।

अपवर्तन के नियम :

–आपतित किरण अपवर्तित किरण तथा अभिलम्ब सभी एक ही तल में होते है ।

–प्रकाश के किसी निश्चित् रंग तथा निश्चित् माध्यमों के युग्म के लिये आपतन कोण की ज्या (sin) तथा अवर्ततन कोण की ज्या का अनुपात स्थिर होता है। इस नियम को स्नेल का अपवर्तन का नियम भी कहते है।

$$\frac{\sin i}{\sin r} = \text{स्थिरांक}$$

अपवर्ततन का कारण : अपवर्तन का मुख्य कारण प्रकाश एक माध्यम से दूसरे माध्यम में गमन के दौरान इसके वेग में परिवर्ततन होना है ।

अपर्वतनांक : दो माध्यमों मे प्रकाश के वेग के अनुपात को अपवर्तनांक कहते है।

$$n_m = \frac{\text{वायु में प्रकाश की चाल माध्यम}}{\text{माध्यम में प्रकाश की चाल}} = \frac{c}{v}$$

गोलीय लैंस : दो पृष्ठों से गिरा हुआ पारदर्शी माध्यम जिसका एक या दोनो पृष्ठ गोलीय है लैंस कहलाता है

लैंस के प्रकार :–लैंस दो प्रकार के होते है

(1) **उत्तल लैंस** (2) **अवतल लैंस**

1– **उत्तल लैंस** : ऐसा लैंस जिसमें बाहर की ओर उभरे दो गोलीय पृष्ठ हो उसे उत्तल लैंस कहते है।

2– **अवतल लैंस** : एक द्विअवतल लैंस अन्दर की ओर वक्रीत दो गोलीय पृष्ठों से घिरा होता है।

मुख्य परिभाषाएँ

1 **वक्रता केन्द्रः** लैंस के गोलीय पृष्ठों को जिन गोलों का भाग मानते है इन गोलों का केन्द्र वक्रता केन्द्र कहलाता है। लैंस में दो वक्रता केन्द्र $C1$ व $C2$ होते है।

2 **मुख्य अक्ष :** किसी लैंस के दोनों वक्रता केन्द्रों से गुजरने वाली काल्पनिक सीधी रेखा लैंस की मुख्य अक्ष कहलाती है।

3 **प्रकाशिक केन्द्रः** लैंस का केन्द्रिय बिन्दु प्रकाशिक केन्द्र कहलाता है। इसे O से प्रदर्शित करते है।

4 **मुख्य फोकस :** लैंस पर मुख्य अक्ष के समांतर आपतित प्रकाश किरणें लैंस से अपवर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के जिस बिन्दु पर मिलती है (उत्तल लैंस) अथवा जिस बिन्दु से अपसारित होती हुइ प्रतीत होती है

(अवतल लैंस) उसे लैंस का मुख्य फोकस कहते है।

5 **फोकस दूरी–** लैंस के मुख्य फोकस की प्रकाशिक केन्द्र से दूरी फोकस दूरी कहलाती है।

गोलीय तल से अपवर्तन के नियम :–

1(अ) बिम्ब से मुख्य अक्ष के समांतर आने वाली प्रकाश किरण उत्तल लैंस से अपवर्तन के पश्चात् लैंस के दूसरी और स्थित मुख्य फोकस से गुजरेगी।

1(ब) अवतल लैंस में अपवर्तन के पश्चात् प्रकाश किरण लैंस के उसी और स्थित मुख्य फोकस से अपसरित होती प्रतीत होती है।

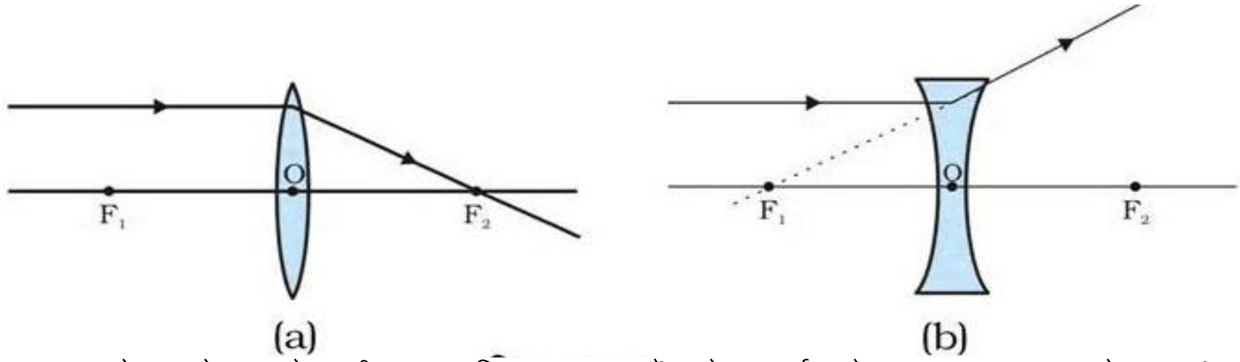

2(अ) मुख्य फोकस से गुजरने वाली प्रकाश किरण उत्तल लैंस से अपवर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के समानांतर निर्गत होगी।

2(ब) अवतल लैंस के मुख्य फोकस पर मिलती प्रतीत होने वाली प्रकाश किरण अपवर्तन के पश्चात् मुख्य अक्ष के समानांतर निर्गत होगी।

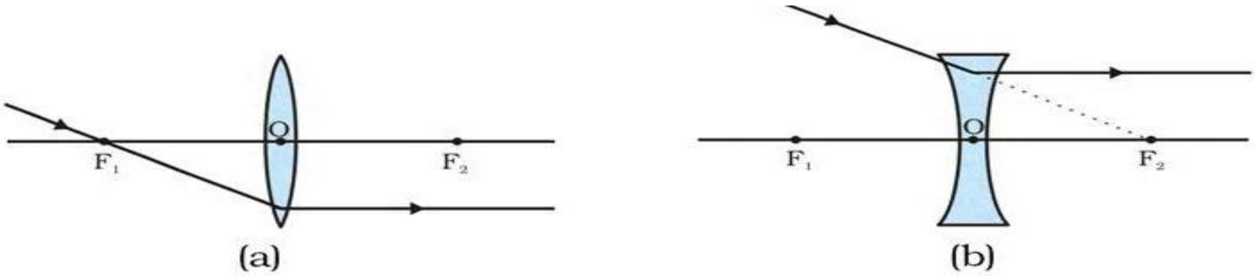

3 लैंस के प्रकाशित केन्द्र से गुजरने वाली प्रकाश किरण अपवर्तन के पश्चात् बिना किसी विचलन के निर्गत होती है।

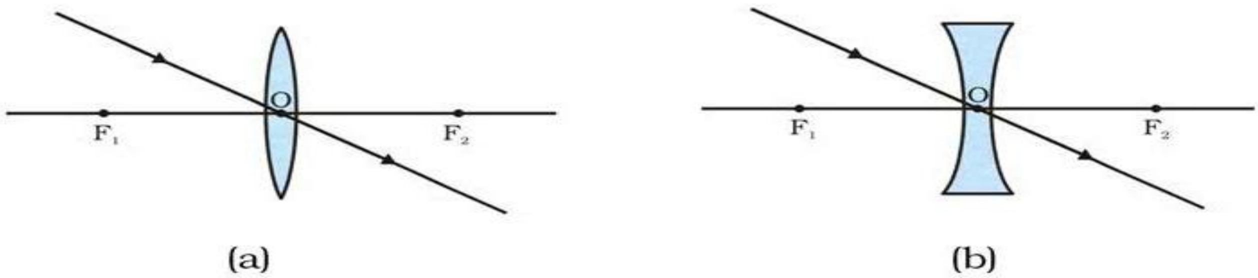

उत्तल लैंस से प्रतिबिन्ब निर्माणः

बिंब की स्थिति	प्रतिबिंब की स्थिति	प्रतिबिंब का आपेक्षिक साइज़	प्रतिबिंब की प्रकृति
अनंत पर	फोकस F_2 पर	अत्यधिक छोटा, बिंदु आकार	वास्तविक तथा उलटा
$2F_1$ से परे	F_2 तथा $2F_2$ के बीच	छोटा	वास्तविक तथा उलटा
$2F_1$ पर	$2F_2$ पर	समान साइज़	वास्तविक तथा उलटा
F_1 तथा $2F_1$ के बीच	$2F_2$ से परे	बड़ा (विवर्धित)	वास्तविक तथा उलटा
फोकस F_1 पर	अनंत पर	असीमित रूप से बड़ा अथवा अत्यधिक विवर्धित	वास्तविक तथा उलटा
फोकस F_1 तथा प्रकाशिक केंद्र O के बीच	जिस ओर बिंब है लेंस के उसी ओर	बड़ा (विवर्धित)	आभासी तथा सीधा

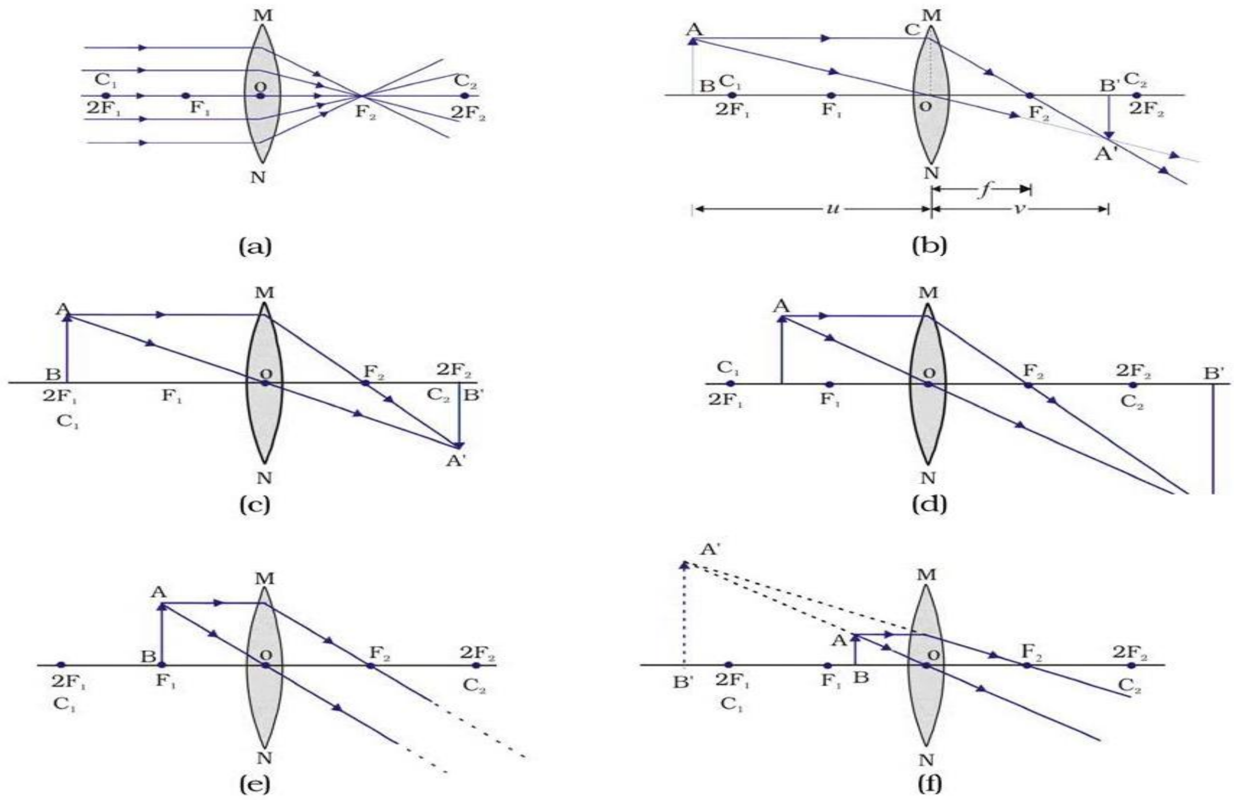

अवतल लैंस से प्रतिबिंब निर्माण : अवतल लैंस सदैव एक आभासी सीधा तथा छोटा प्रतिबिंब बनाता है चाहे बिंब कही भी स्थित हो (अनन्त को छोडकर)

बिंब की स्थिति	प्रतिबिंब की स्थिति	प्रतिबिंब का आपेक्षिक साइज़	प्रतिबिंब की प्रकृति
अनंत पर	फोकस F_1 पर	अत्यधिक छोटा, बिंदु आकार	आभासी तथा सीधा
अनंत तथा लेंस के प्रकाशिक केंद्र O के बीच	फोकस F_1 तथा प्रकाशिक केंद्र O के बीच	छोटा	आभासी तथा सीधा

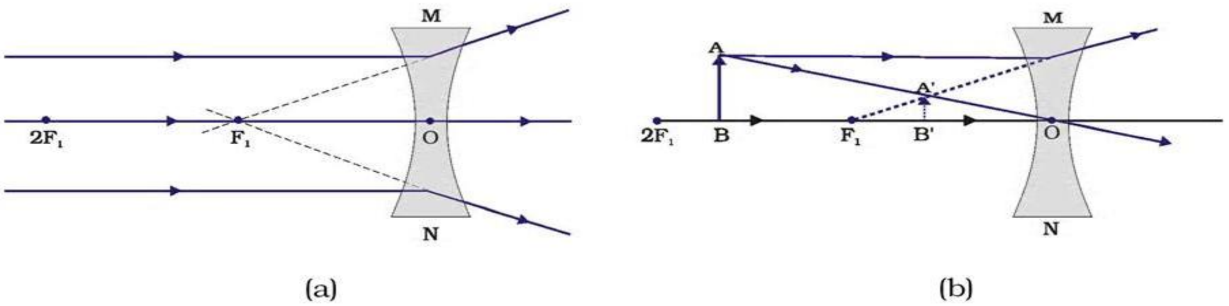

(a) (b)

लैंस सूत्र	लैंस का आवर्धन
$\frac{1}{v} - \frac{1}{u} = \frac{1}{f}$	आवर्धन(m)= $\frac{\text{प्रतिबिम्ब की ऊँचाई (h')}}{\text{बिम्ब की ऊँचाई (h)}}$
बिंब की प्रकाशिक केन्द्र से दूरी = u प्रतिबिंब की प्रकाशिक केन्द्र से दूरी = v मुख्य फोकस से प्रकाशिक केन्द्र की दूरी =f	आवर्धन(m)= $\frac{h'}{h} = \frac{v}{u}$

उत्तल लैंस व अवतल लैंस में अन्तर :

उत्तल लैंस	अवतल लैंस
1 इस लैंस में बाहर की ओर उभरी दो गोले पृष्ठ होते है।	1 इस लैंस में अन्दर की ओर वक्रीत दो गोलीय पृष्ठ होते है।
2 यह किनारों की अपेक्षा बीच में से मोटा होता है।	2 यह बीच की अपेक्षा किनारों से मोटा होता है।
3 यह प्रकाश किरणों को एक बिन्दु पर केन्द्रित करता है।	3 यह प्रकाश किरणों को फैला देता है।
4 इससे वास्तविक अथवा आभासी प्रतिबिम्ब बनते है।	4 यह केवल आभासी तथा सीधा प्रतिबिम्ब बनाता है।
5 इसके द्वारा बिम्ब से छोटे बराबर तथा बडे प्रतिबिम्ब बनते है।	5 यह सदैव बिम्ब से छोटा प्रतिबिम्ब बनाता है।

लैंस की क्षमता : किसी लैंस द्वारा प्रकाश किरणों को अभिसरण या अपसरण (फैलाना) करने की क्षमता को लैंस की क्षमता कहा जाता है। इसे p द्वारा निरूपित किया जाता है।

$$P = 1/f$$

लैंस की क्षमता का मात्रक : डायप्टर (D)

एक डायप्टर क्षमता : किसी लैंस की फोकस दूरी एक मीटर है तो उसकी क्षमता एक डायप्टर होगी ।

Note : जब प्रकाश दो माध्यमों के अन्तरापृष्ठ पर अभिलम्बवत आपतित होता है तो बिना मुडे सीधा निकल जाता है।

पाठ –11

मानव नेत्र तथा रंगबिरंगा संसार

मानव नेत्र की सरंचना का सचित्र वर्णन

1 **श्वेत पटल**– यह आंख के गोले के उपरी सतह पर एक मोटी सख्त, सफेद एवं अपारदर्शक सतह के रूप में होता है , यह आखं की बाहरी चोट से रक्षा करता है

2 **कार्निया या स्वच्छ मण्डल** – यह श्वेत मण्डल के सामने का कुछ उभरा हुआ भाग होता है प्रकाश इसी पतली झिल्ली से होकर नेत्र में प्रवेश करता है।

3 **परितारिका या आईरिस** – यह कार्निया के पीछे एक अपारदर्शक पर्दा होता है जो पुतली के साईज को नियंत्रित करता है ।

4 **तारा या पुतली –** आइरिस के बीच वाले छिद्र को तारा कहते है यह नेत्र में प्रवेश होने वाली प्रकाश की मात्रा को नियंत्रित करता है ।

5 **नेत्र लैंस –** आईरिस के पीछे एक मोटा लचीला उत्तल लैस होता है जिसे नेत्र लैस कहते है । मांस पेशियों पर तनाव को परिवर्तित कर इस लैस की वक्रता त्रिज्या को परिवर्तित किया जा सकता है । इसी लैस से देखने वाली वस्तु का उल्टा, छोटा एवं वास्तविक प्रतिबिम्ब बनता है।

6 **रक्त पटल या कारॉईड–** यह श्वेत पटल के नीचे अन्दर की ओर एक काले रंग की झिल्ली होती है। इसके पृष्ठ भाग में बहुत सी रक्त की धमनी एवं शिराये होती है , जो नेत्र का पोषण करती है।

7 **दृष्टिपटल या रेटिना –** यह रक्त पटल के नीचे एक कोमल सूक्ष्म झिल्ली होती है जिसमें अधिक संख्या में प्रकाश सुग्राही कोशिकाएं होती है । दृष्टिपटल के लगभग बीच में एक वृत्ताकार स्थान होता है जिसे पीत बिन्दु कहते है । जब वस्तु का प्रतिबिम्ब पीत बिन्दु पर बनता है तो सबसे स्पष्ट दिखाई देता है।

8 **जलीय द्रव** – नेत्र लैस एवं स्वच्छ मण्डल के बीच के स्थान में एक पारदर्शक पतला द्रव भरा रहता है। जिसे जलीय द्रव कहते है ।

9 **काचाभ द्रव –** नेत्र लैस एवं रेटिना के बीच जो पारदर्शक द्रव भरा रहता है उसे काचाभ द्रव कहते है।

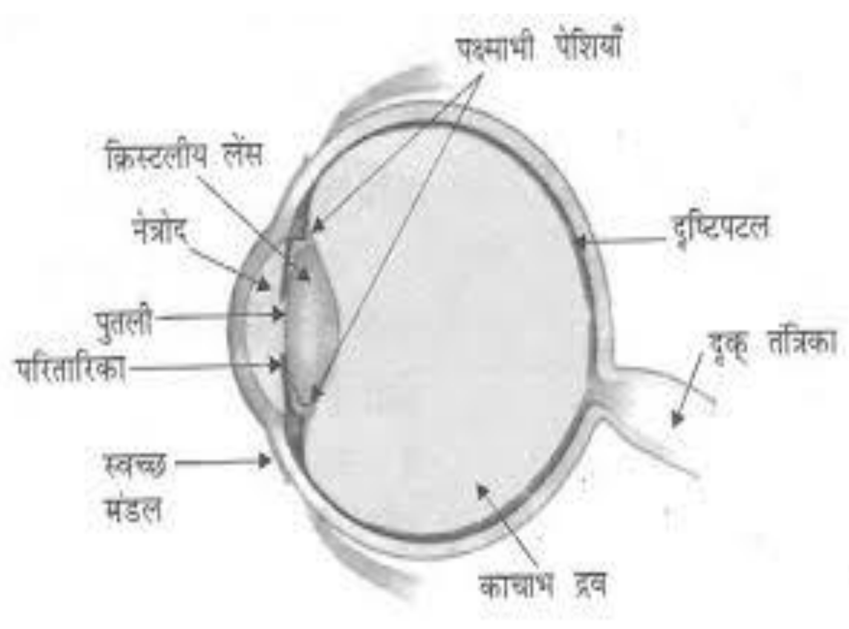

नेत्र की सरंचना

समंजन क्षमता – मानव नेत्र का लेंस पास व दूर की चीजे देखने के लिए अपनी फोकस दूरी को समायोजित कर सकता है इसे नेत्र की संमजन क्षमता कहते है।

निकट बिन्दू– नेत्र से वह कम से कम दूरी जंहा पर रखी वस्तु साफ दिखाई दे उसे नेत्र का निकट बिन्दू कहते है मानव नेत्र का निकट बिन्दु 25 सेमी होता है।

दूर बिन्दू – नेत्र से वह अधिकतम दूरी जंहा पर रखी वस्तु साफ दिखाई दे उसे नेत्र का दूर बिन्दू कहते है । मानव नेत्र के लिए दूर बिन्दू अनन्त पर होता है।

नोट–

1 दृष्टि के लिए एक नेत्र की अपेक्षा दो नेत्र होने के अनेक लाभ है।

2 इससे दृष्टि नेत्र विस्तृत हो जाता है । मानव के एक नेत्र के क्षैतीज दृष्टि क्षेत्र 150 डिग्री होता है जबकि दोनो नेत्रो द्वारा यह लगभग 180 डिग्री हो जाता है।

3 शिकार करने वाले जन्तुओ के दो नेत्र प्रायः उनके सिर पर विपरित दिशाओं में स्थित होते है जिससे के उन्हे अधिकतम दृष्टि क्षेत्र प्राप्त हो सकें।

दृष्टि दोष तथा उनका संशोधन :– कभी कभी नेत्र धीरे धीरे अपनी समंजन क्षमता खो सकते । ऐसी स्थितियों में व्यक्ति वस्तुओं को स्पष्ट नहीं देख पाते है।प्रमुख रूप से दृष्टि के तीन दोष होते है ।

1. निकट दृष्टि दोष **2. दीर्घ दृष्टि दोष** **3. जरा दूर दृष्टिता**

1 **निकट दृष्टि दोष –** इस दोष मे व्यक्ति निकट रखी वस्तुओं को तो स्पष्ट देख सकता है परन्तु दूर रखी वस्तुओं को वह स्पष्ट नहीं देख पाता । दूर रखी वस्तु का प्रतिबिम्ब रेटिंना पर न बनकर रेटिना के पहले बनता है।

कारण – (1) अभिनेत्र लैंस की वक्रता का अधिक होना ।

(2) नेत्र गोलक का लम्बा हो जाना ।

संशोधन :– इस दोष को अवतल लैस के उपयोग से संशोधित किया जा सकता है

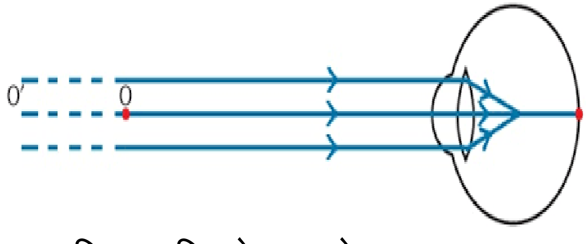

निकट दृष्टि दोषयुक्त नेत्र

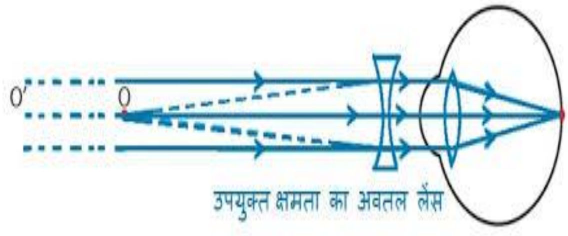

संशोधित नेत्र

2 **दीर्घ दृष्टि दोष –** इस दोष में व्यक्ति दूर की वस्तुओ को तो स्पष्ट देख सकता है परन्तु पास रखी वस्तओं को स्पष्ट नहीं देख पाता है। पास रखी वस्तु का प्रतिबिम्ब रेटिना पर ना बनकर रेटिना के पीछे बनता है।

कारण – (1) इसमें अभिनेत्र लैस की वक्रता का कम होना।

(2) नेत्र गोलक का छोटा हो जाना ।

संशोधन – इस दोष को उत्तल लैस का उपयोग करके संशोधित किया जाता है।

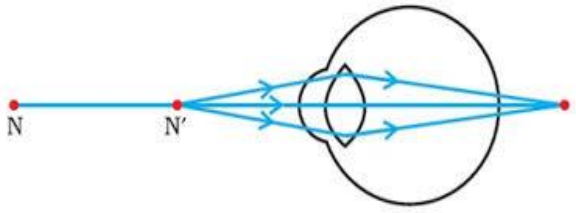

दूर दृष्टि दोष युक्त नेत्र

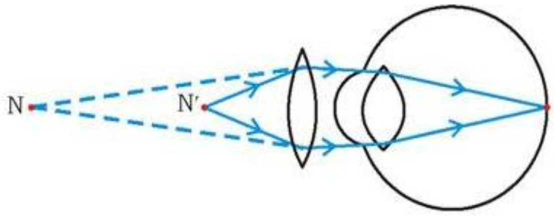

संशोधित नेत्र

छात्र हेतु याद रखने का तरीका

अवतल लैंस की दोनो सतह **नि**कट होती है अतः **नि**कट दृष्टि दोष निवारण में उपयोग ।

अव–नीश अर्थात अवतल लैंस निकट दृष्टि दोष

उत्तल लैंस की दोनो सतह **दू**र होती है अतः **दू**र (**दी**र्घ) दृष्टि दोष निवारण में उपयोग ।

उर्दू अर्थात उ–उत्तल, दू–दूर दृष्टि दोष

जरादूर दृष्टिता –आयु मे वृद्वि होने के साथ साथ मानव नेत्र की संमजन क्षमता घट जाती है यह पक्ष्माभी पेशियों के दुर्बल होने तथा क्रिस्टलीय लैस के लचीले पन में कमी के कारण होता है। चश्मे के बिना पास की वस्तु को सुस्पष्ट देखने में कठिनाई होती है। कभी कभी किसी व्यक्ति के नेत्र में दोनों ही प्रकार के दोष हो सकते है। ऐसे व्यक्तियों को वस्तुओ को सुस्पष्ट देखने के लिए प्रायः द्विफोकसी लैसो की आवश्यकता होती है ।वर्तमान में संस्पर्श लैंस अथवा शल्य हस्तक्षेप(शल्यक्रिया) द्वारा सुस्पष्ट दृष्टि का पाना संभव है।

मोतियाबिन्दु – कभी कभी अधिक आयु के कुछ व्यक्तियों क नेत्र का क्रिस्टलीय लैंस दूधिया तथा धुंधला हो जाता है। इसे मोतियाबिन्दु कहते है। इस लक्षण को दूर करने के लिए मरीज की आंख में इन्ट्राऑक्युलर लैस (कृत्रिम लैस) लगाया जाता है।

	निकट दृष्टि दोष		**दूर दीर्घ दृष्टि दोष**
1	पास का साफ दिखाई देता है	1	दूर का साफ दिखाई देता है
2	दूर का साफ दिखाई नहीं देता है।	2	पास का साफ दिखाई नहीं देता है।
3	प्रतिबिम्ब रेटिना के सामने बनता है।	3	प्रतिबिम्ब रेटिना के पींछे बनता है।
4	इस दोष को दूर करने क लिए अवतल लैंस (अपसारी लैस)काम में लेते है।	4	इस दोष को दूर करने क लिए उत्तल लैंस (अभिसारी लैस)काम में लेते है।

<u>प्रिज्म से प्रकाश का अपवर्तन</u>

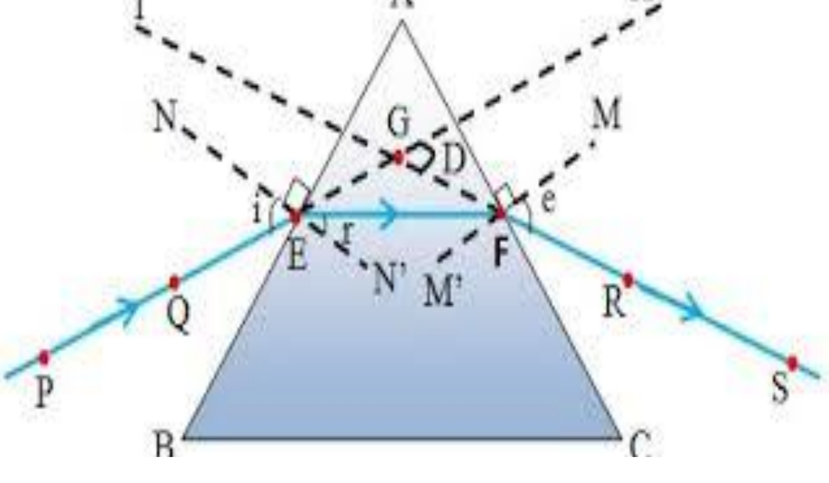

PE= आपतित किरण

EF= अपवर्तित किरण

FS= निर्गत किरण

A= प्रिज्म कोण

i= आपतन कोण

r= अपवर्तन कोण

e= निर्गत कोण

D= विचलन कोण

A= प्रिज्म कोण – प्रिज्म के दो पार्श्व फलको के बीच के कोण को प्रिज्म कोण कहते है।

D = विचलन कोण – प्रिज्म की विशेष आकृति के कारण निर्गत किरण , आपतित किरण की दिशा से एक कोण बनाती है, इस कोण को '' विचलन कोण ''कहते है।

श्वेत प्रकाश का विक्षेपण – जिस परिघटना में कांच के प्रिज्म से होकर गुजरने वाला श्वेत प्रकाश अपने अवयवी वर्णो मे विभाजित हो जाता है उसे प्रकाश का विक्षेपण कहते है।

विक्षेपण का कारण – प्रिज्म से गुजरने के पश्चात् प्रकाश के विभिन्न वर्ण आपतित किरण के सापेक्ष अलग अलग कोणो पर झुकते है । लाल प्रकाश सबसे कम झुकता है जबकि बैंगनी प्रकाश सबसे अधिक झुकता हैं। इसलिए प्रत्येक वर्ण की किरणे अलग अलग पथों से निर्गत होती है । तथा सुस्पष्ट वर्णो का बैंड (स्पेक्ट्रम) बनाती है।

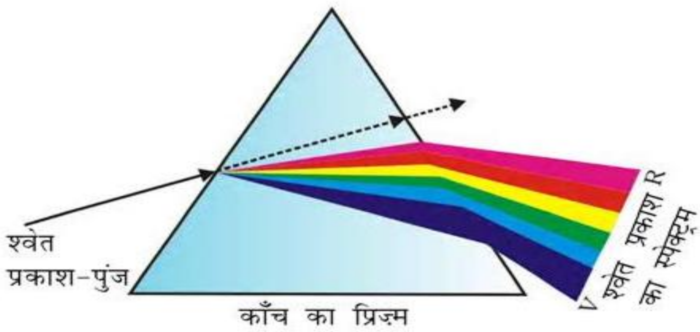

- स्पेक्ट्रम के सात रंग (ऊपर से नीचे की ओर) लाल,नारंगी,पीला,हरा,नीला,जामुनी,बैगनी।
- सबसे अधिक विचलन बैंगनी रंग तथा सबसे कम विचलन लाल रंग होता है ।

इन्द्र धनुष का बनना

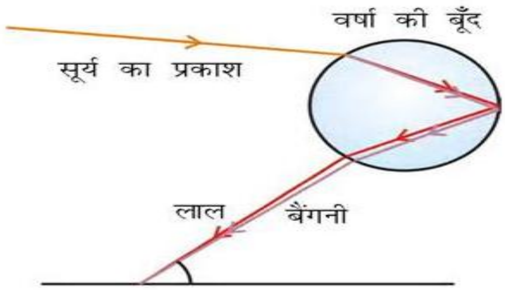

इन्द्रधनुष वर्षा के बाद आकाश में सूर्य की विपरीत दिशा में जल के सूक्ष्म कणो में दिखाई देने वाला एक प्राकृतिक स्पेक्ट्रम है।यह वायुमण्डल में उपस्थित जल की सूक्ष्म बूंदो द्वारा सुर्य के प्रकाश के परिक्षेपण(विक्षेपण) के कारण प्राप्त होता है।

प्रकाश का अवर्तन – जब प्रकाश एक माध्यम से दूसरे माध्यम में जाता है तो दोनों माध्यमों को अलग करने वाली सतह से टकराने पर प्रकाश का वेग बदल जाता है। जिसके कारण प्रकाश की दिशा भी बदल जाती है। इस घटना कों प्रकाश का अपवर्तन कहते है।

माध्यम दो होते है।

1 **सघन** –जिसमे प्रकाश का वेग कम होता है। उदाहरण – कांच

2 **विरल** – इस माध्यम में प्रकाश का वेग अधिक होता है –उदाहरण – हवा

वायुमण्डल अपवर्तन – वायुमण्डल में अलग –अलग घनत्व की परते होती है । जिनमे प्रकाश गुजरता है, तो प्रकाश किरणों का बार बार अपवर्तन होता है। जिसे वायुमण्डलीय अपवर्तन कहते है। वायुमण्डलीय अपवर्तन पर आधारित घटनाए–

1 तारों का टिमटिमाना
2 आग के ऊपर से देखने पर वस्तुओं का हिलती हुई नजर आना
3 तारों का अपनी वास्तविक स्थिति से थोडे ऊपर दिखाई देना।
4 अग्रिम सूर्योदय तथा विलम्बित सूर्यास्त

1 **तारों का टिमटिमाना –** रात के समय हमे आकाश में अंसख्य तारें टिमटिमाते हुए दिखाई देते है । तारे वायुमण्डलीय अपवर्तन के कारण टिमटिमाते हुऐ दिखाई देते है तारो से आने वाली प्रकाश किरणें जब वायुमण्डल की विभिन्न परतों से गुजरती हे तो वायुमण्डल अपवर्तन के कारण वे अपने मार्ग से विचलित हो जाती है। जिससे तारों की आभासी स्थिति दिखाई देती है।

2 **तारों का अपनी वास्तविक स्थिति से थोडे ऊपर दिखाई देना–** तारे वायुमण्डल अपवर्तन के कारण अपनी वास्तविक स्थिति से थोडे ऊपर दिखाई देतें है।

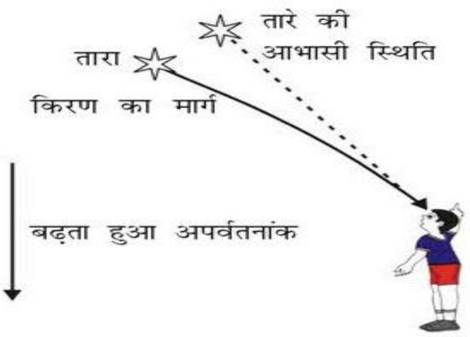

तारों का अपनी वास्तविक स्थिति से थोडे ऊपर दिखाई देना

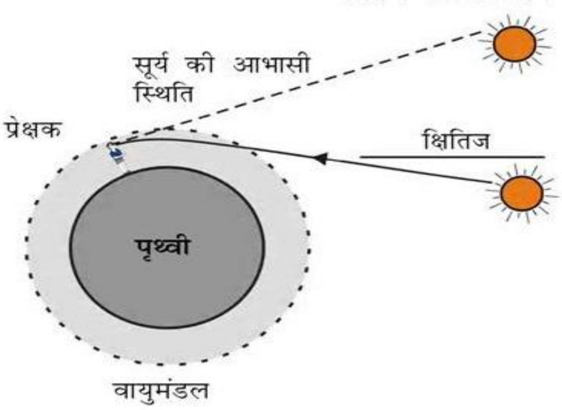

अग्रिम सूर्योदय तथा विलम्बित सूर्यास्त

3 **अग्रिम सुर्योदय** – सूर्य उगने से पहले नजर आना

4 **विलम्बित सूर्यास्त** – (सूर्य अस्त होने के बाद भी कुछ समय तक सूर्य का नजर आना) वायुमण्डलीय अपवर्तन से कारण अग्रिम सुयोदय व विलम्बित सूर्यास्त होता है।

वायुमण्डल अपवर्तन के कारण सूर्य 2 मिनट पहले सूर्य उदय से व सूर्यास्त के 2 मिनट बाद तक सूर्य दिखाई देता है । अतः वायुमण्डलीय अपवर्तन के कारण दिन की लम्बाई 4 मिनट बढ जाती है।

ग्रह क्यों नहीं टिमटिमातें – ग्रह तारों की अपेक्षा पृथ्वी के बहुत पास होते है जिसके कारण तारों की अपेक्षा ग्रहों से अधिक प्रकाश किरणे पृथ्वी सतह पर आती है जिनके विचलन का औसल मान शून्य हो जाता है। इसी कारण ग्रह टिमटिमाते हुए दिखाई नहीं देतें।

अध्याय–12
विद्युत

विद्युत परिपथः–किसी विद्युत धारा के सतत तथा बंद पथ को विद्युत परिपथ कहते है।

विद्युत धाराः– विद्युत आवेश के प्रवाह की दर को विद्युत धारा कहते हैं।

यदि किसी चालक कि किसी अनुप्रस्थ काट (विशेष बिन्दु) से समय t मे नेट आवेश Q प्रवाहित होता है, तब उस अनुप्रस्थ काट से प्रवाहित विद्युत धारा I को निम्न प्रकार से व्यक्त करते हैः–

I= Q/t = कूलाम/सेकण्ड = एम्पियर (A)

.1 **एम्पियर विद्युत धाराः–** यदि किसी चालक की किसी अनुप्रस्थ काट से एक सैकण्ड मे एक कुलाम आवेश प्रवाहित होता है तो विद्युत धारा का मान एक एम्पियर होगा।

1एम्पियर = 1कूलाम/1सेकण्ड

NOTE-1 परिपथ में विद्युत धारा मापने के लिए अमीटर का उपयोग करते है। इसे सदैव विद्युत परिपथ के श्रेणी क्रम में संयोजित करते है।

NOTE-2 एक इलेक्ट्रान पर आवेश का मान 1.6×10^{-19} कूलॉम होता है।

विद्युत विभवः–इकाई धनावेश को अनन्त से विद्युत क्षेत्र के किसी बिन्दु तक लाने मे किया गया कार्य विद्युत विभव कहलाता है।

विभवान्तरः– किसी धारावाही विद्युत परिपथ के दो बिन्दुओ के मध्य इकाई धनावेश को एक बिन्दु से दुसरे बिन्दु तक लाने में किया गया कार्य उन दोनो बिन्दुओ के मध्य विभवान्तर कहलाता है।

NOTE- विद्युत विभव तथा विभवान्तर दोनो का सूत्र एक समान है।

विभव अथवा विभवांतर = कार्य/आवेश = w/Q = जूल/कूलॉम = वोल्ट

वोल्ट की परिभाषाः–

यदि किसी विद्युत धारावाही चालक के दो बिंदुओ के बीच एक कुलाम आवेश को एक बिंदू से दूसरे बिंदु तक ले जाने मे 1 जूल कार्य किया जाता है तो उन बिंदुओ के मध्य विभवांतर 1 वोल्ट होता है।

1 वोल्ट = 1जूल/1 कूलाम

NOTE- विभवांतर का मापन वोल्टमीटर द्वारा की जाती है वोल्टमीटर को उन बिंदुओं के पार्श्व क्रम मे संयोजित करते है जिनके बीच विभवांतर मापना हैं।

विद्युत परिपथ आरेखः– विद्युत परिपथो का ऐसा व्यवस्था आरेख खींचना सुविधाजनक होता है जिसमे परिपथ के पिभिन्न अवयवो को सुविधा जनक प्रतीको द्वारा निरूपित किया जाता है। सामान्य उपयोग में आने वाले कुछ विद्युत अवयवो को निरूपित करने वाले रूढ प्रतीक निम्न है–

क्रम संख्या	अवयव	प्रतीक
1	विद्युत सेल	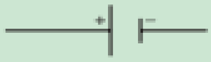
2	बैटरी अथवा सेलों का संयोजन	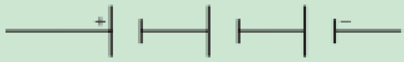
3	(खुली) प्लग कुंजी अथवा स्विच	
4	(बंद) प्लग कुंजी अथवा स्विच	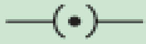
5	तार संधि	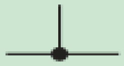
6	(बिना संधि के) तार क्रॉसिंग	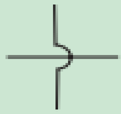
7	विद्युत बल्ब	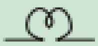 या
8	प्रतिरोधक	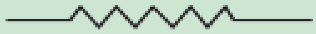
9	परिवर्ती प्रतिरोधक अथवा धारा नियंत्रक	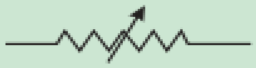 या 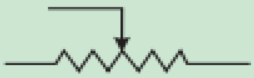
10	ऐमीटर	
11	वोल्टमीटर	

ओम का नियम– एक विद्युत परिपथ में तार का ताप समान रहे तो उसके दोनो सिरो के मध्य उत्पन्न विभवान्तर उसमे प्रवाहित होने वाली विद्युत धारा के समानुपाती होता है।

$$V \propto I \qquad V = IR$$

प्रतिरोध:–यह चालक का गुण है जो कि अपने मे प्रवाहित होने वाले आवेश के प्रवाह का विरोध करता हे। प्रतिरोध का SI मात्रक ओम है। इसे ग्रीक भाषा के शब्द ओमेगा (Ω) से निरूपित करते हैं।

$$R = V/I$$

1 ओम प्रतिरोध– किसी चालक मे एक एम्पियर धारा प्रवाहित करने पर यदि उसके दोनो सिरो के बीच विभवान्तर एक वोल्ट है, तब उस चालक का प्रतिरोध एक ओम होगा।

1 ओम = 1वोल्ट/1 एम्पियर

NOTE- विद्युत धारा,प्रतिरोध के व्युत्क्रमानुपाती होती है।

प्रतिरोध की निर्भरता–

किसी चालक का प्रतिरोध निम्न कारको पर निर्भर करता है।

01. **चालक की लम्बाई**– चालक का प्रतिरोध उसकी लम्बाई के समानुपाती होता है।

$$R \propto l \text{ ------(1)}$$

02. **चालक की अनुप्रस्थ काट (मोटाई)**– चालक का प्रतिरोध उसकी अनुप्रस्थ काट के क्षेत्रफल के व्युत्क्रमानुपाती होता है।

$$R \propto 1/A \text{ -----(2)}$$

03. **चालक की प्रकृति**– विभिन्न चालको का प्रतिरोध उसकी प्रकृति के अनुसार भिन्न–भिन्न होतो हैं।
04. **चालक का ताप**– ताप बढने पर चालक का प्रतिरोध बढता है तथा घटने पर प्रतिरोध कम होता है।

विशिष्ट प्रतिरोध/प्रतिरोधकता– इकाई लम्बाई तथा इकाई अनुप्रस्थ काट वाले चालक का प्रतिरोध उसकी प्रतिरोधकता कहलाती है। समी. (1) व (2) से–

$$R = \rho l/A \quad \text{अथवा} \quad \rho = RA/l$$

NOTE- मिश्र धातुओ की प्रतिरोधकता अधिक होती है तथा इनका उच्च ताप पर दहन भी नहीं होता। इसी कारण इनका उपयोग इस्तरी,टोस्टर जैसी विद्युत तापन युक्तियो के निर्माण मे किया जाता है।

NOTE - विद्युत बल्ब के तंतुओ के निर्माण मे टंगस्टन धातु का प्रयोग किया जाता है। तथा इसकी आयु में वृद्धि के लिये इसमे नाइट्रोजन व आर्गन गैस भरी जाती है क्योंकि ये दोनो अक्रिय होती है।

प्रतिरोधों के निकाय का प्रतिरोध–

1. **श्रेणीक्रम संयोजन**:– जब विभिन्न प्रतिरोधकों के श्रृखला में इस प्रकार संयोजित किया जाये कि एक प्रतिरोध का अन्तिम सिरा दूसरे प्रतिरोध के प्रथम सिरे से संयाजित हो तो इसे श्रेणीक्रम संयोजन कहते हैं।
2. इस संयोजन में प्रत्येक प्रतिरोधक में समान विद्युत धारा प्रवाहित होती है परन्तु प्रत्येक प्रतिरोधक का विभवान्तर भिन्न–भिन्न होता है।

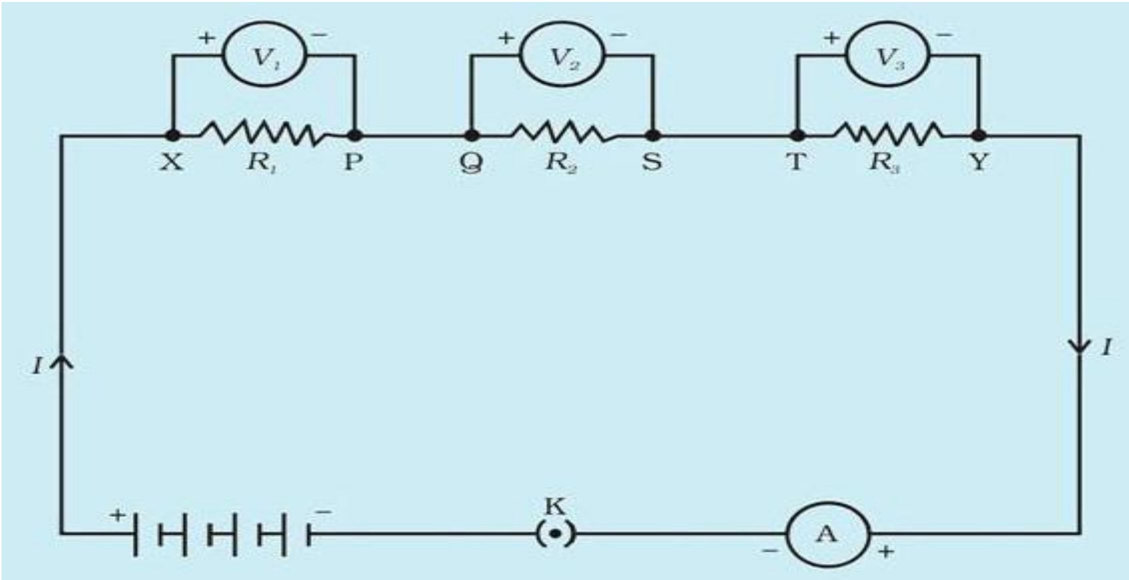

माना कि उपर्युक्त परिपथ में प्रवाहित विद्युत धरा I है । प्रतिरोधक R_1 का विभवान्तर V_1 ,R_2 का V_2 तथा R_3 का V_3 है। श्रेणीक्रम में जुडे इन तीनों प्रतिरोधको को एक ऐसे तुल्य एकल प्रतिरोधक जिसका प्रतिरोध R_s है के द्वारा प्रतिस्थापित करना संभव है जिसे परिपथ में जोडने पर विभवान्तर V तथा प्रवाहित धारा I होती है । समस्त परिपथ पर ओम का नियम प्रयुक्त करने पर–

$V=IR_s$-------------------(1)

तीनों प्रतिरोधों पर पृथक–पृथक ओम का नियम प्रयुक्त करने पर –

$V_1=IR_1$-------------------(2)

$V_2=IR_2$-------------------(3)

$V_3=IR_3$-------------------(4)

चूंकि प्रतिरोधकों के श्रेणीक्रम संयोजन में सिरों के बीच कुल विभवान्तर व्यष्टिगत (एकल)प्रतिरोधाकों के विभवान्तरों के योग के बराबर होता है।अतः

$$V = V_1 + V_2 + V_3$$

उपर्युक्त समीकरण में V, V_1, V_2, V_3 का मान रखने पर –

$IR_S=IR_1+IR_2+IR_3$

$IR_S=I(R_1+R_2+R_3)$

$R_S= R_1+R_2+R_3$

उपर्युक्त समीकरण से निष्कर्ष निकलता है कि श्रेणीक्रम संयोजन में संयोजन का कुल प्रतिरोध भिन्न – भिन्न प्रतिरोधों के योग के बराबर होता है।

पार्श्वक्रम में संयोजन :–

1– जब प्रतिरोधकों का संयोजन इस प्रकार हो कि प्रत्येक प्रतिरोधक का प्रथम सिरा एक साथ संयोजित हो एंव दूसरा सिरा एक साथ दूसरे बिन्दू पर संयोजित हो ता उसे पार्श्वक्रम संयोजन कहते है।

2–पार्श्वक्रम संयोजन में प्रत्येक प्रतिरोधक में प्रवाहित धारा का मान भिन्न–भिन्न होता है, परन्तु विभवान्तर का मान समान रहता है ।

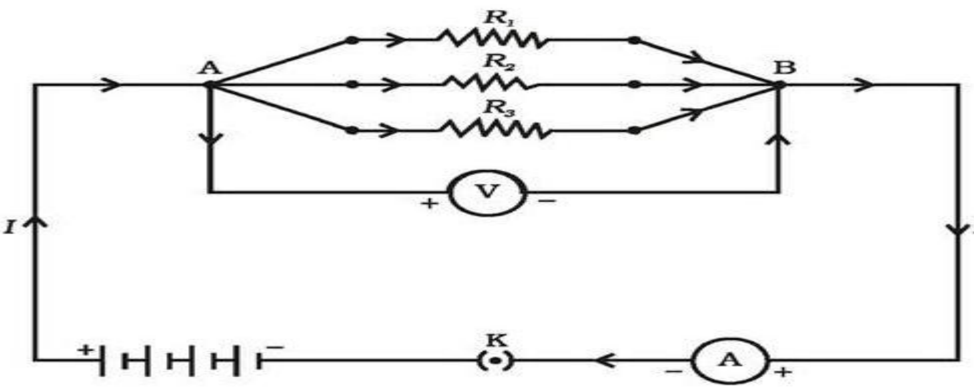

उपर्युक्त परिपथ में धारा I बिन्दू X पर जा कर तीन भागों में विभक्त हो जाती है। मापने पर पाया कि प्रतिरोधक R_1 में धारा I, R_2 में धारा I_2 व R_3 में धारा I_3 प्रवाहित हो रही है।

माना कि प्रतिरोधकों के पार्श्वक्रम संयोजन का तुल्य प्रतिरोध R_ρ है। प्रतिरोधको के पार्श्वक्रम संयोजन पर ओम का नियम लागू करने पर–

$I=V/ R_\rho$

संयोजन के प्रत्येक प्रतिरोधक पर ओम का नियम लागू करने पर–

$I_1=V/R_1$

$I_2=V/R_2$

$I_3=V/R_3$

पर्श्व में संयोजित प्रतिरोधकों में प्रवाहित कुल धारा I, संयोजन के प्रत्येक प्रतिरोधक में प्रवाहित होने वाली पृथक धाराओं के योग के बराबर होती है–

$I= I_1+I_2+I_3$

उपर्युक्त समीकरण में I, I_1, I_2, I_3 के मान रखने पर–

$V/R_\rho=V/R_1 +V/R_2 +V/R_3$

$V/R_\rho=V(1/R_1 +1/R_2 +1/R_3)$

$1/R_\rho=1/R_1 +1/R_2 +1/R_3$

उपर्युक्त समीकरण से निष्कर्ष निकलता है कि पार्श्वक्रम मे संयोजित प्रतिरोधों के समूह के तुल्य प्रतिरोध का व्युत्क्रम पृथक प्रतिरोधो के व्युत्क्रमो के योग के बराबर होता है।

श्रेणिक्रम तथा समान्तर क्रम (पार्श्वक्रम) संयोजन की तुलना/विशेषताऐं–

क्रम संख्या	**श्रेणीक्रम संयोजन**	**पार्श्वक्रम संयोजन**
01	एक प्रतिरोधक का अंतिम सिरा दूसरे प्रतिरोधक के प्रथम सिरे से संयोजित होता है।	प्रत्येक प्रतिरोधक के प्रथम सिरे एक साथ एक बिन्दु पर व दूसरे सिरे दूसरे बिन्दु पर एक साथ संयोजित होते है।
02	प्रत्येक प्रतिरोध मे समान व़िद्युत धारा प्रवाहित होती है।	प्रत्येक प्रतिरोधक मे भिन्न मान की व़िद्युत धारा प्रवाहित होती है।
03	प्रत्येक प्रतिरोधक का विभवान्तर भिन्न–भिन्न होता हैं।	प्रत्येक प्रतिरोधक का विभवान्तर समान होता है।
04	तुल्य प्रतिरोध का मान प्रत्येक प्रतिरोध के मान के योग के बराबर होता हे।	तुल्य प्रतिरोध का व्युत्क्रम पृथक प्रतिरोधो के व्युत्क्रमो के योग के बराबर होता है।
05	तुल्य प्रतिरोध का मान किसी भी एकल प्रतिरोध के मान से अधिक होता है।	तुल्य प्रतिरोध का मान संयोजन के प्रतिरोध के न्यून मान से भी क्रम होता है।

NOTE- किसी व़िद्युत परिपथ मे विभिन्न उपकरणो को श्रेणी क्रम मे संयोजित नहीं कर सकते क्यो कि श्रेणीक्रम संयोजन से तुल्य प्रतिरोध का मान बंढ जाता है, इस कारण धारा का मान कम हो जाता है। अतः प्रत्येक उपकरण को उनकी आवश्यकतानुसार धारा नहीं मिल पाती। साथ ही जब परिपथ का एक अवयव कार्य करना बंद कर देता है तो परिपथ टूट जाता है। और परिपथ का अन्य कोई अवयव कार्य नहीं कर पाता।

घरो मे विभिन्न व़िद्युत उपकरणो को पार्श्व क्रम मे संयोजित किया जाता है क्यो कि पार्श्वक्रम संयोजन से तुल्य प्रतिरोध का मान घट जाता है। यह परिपथ मे भिन्न–भिन्न प्रतिरोध वाले साधनो को कार्य करने के लिए

उनकी आवश्यकतानुसार धारा उपलब्ध कराता है। साथ ही परिपथ का एक अवयव कार्य करना बंद कर देता है तो परिपथ के अवयवो पर इसका कोई प्रभाव नहीं पडता।

विद्द्युत धारा का तापीय प्रभावः– जब किसी चालक मे विद्द्युत धारा प्रवाहित कि जाती है तो चालक के परमाणुओ के स्वतंत्र इलेक्ट्रान गति करने लगते है । उनकी गति मे चालक के अन्य परमाणु बाधा उत्पन्न करते है।इलेक्ट्रोन के प्रवाह को बनाये रखने के लिए लगातार कार्य करना पडता है। यह कार्य ऊष्मा ऊर्जा के रूप मे संग्रहित हो जाता है ओर ऊष्मा उत्पन्न होती है। इसे विद्द्युत धारा का ऊष्मीय प्रभाव कहते हे।

माना कि एक प्रतिरोधक जिसका प्रतिरोध R है,मे विद्द्युत धारा I प्रवाहित हो रही है। इसके सिरो के बीच उत्पन्न विभवांतर v है। हम जानते है कि Q आवेश को एक बिन्दु से दूसरे बिन्दु तक लाने मे किया गया कार्य हो तो –

$$V=W/Q$$

$$W=VQ \quad (\because I = Q/t \text{ या } Q = It)$$

$$W=VIt$$

ओम के नियम से– $V=IR$ या $I = V/R$ यह मान उपर्युक्त समी. मे रखने पर–

$$W=IR \times It$$

$$W=I^2Rt \quad (\because I = V/R)$$

$$W=VxVxRxt/RxR \quad \text{or} \quad W=V^2t/R$$

स्त्रोत द्वारा किया गया यह कार्य अथवा उर्जा ऊष्मा के रूप में प्रतिरोधक में क्षयित हो जाती है।अतः उत्पन्न ऊष्मा की मात्रा

$$H = I^2Rt \quad \text{या} \quad H = V^2t/R$$

इसे जूल का तापन नियम कहते है। नियम से यह स्पष्ट है कि किसी प्रतिरोधक में उत्पन्न होने वाली ऊष्मा –

1– दिये गये प्रतिरोध में प्रवाहित होने वाली विद्युत धारा के वर्ग के समानुपाती होती है।

2– दी गयी विद्युत धारा पर प्रतिरोध के समानुपाती होती है।

3– उस समय के समानुपाती होती है जिसके लिये दिये गये प्रतिरोध से विद्युत धारा प्रवाहित होती है।

विद्युत धारा के तापीय प्रभाव के व्यावहारिक अनुप्रयोग–

1– विद्युत इस्तरी, टोस्टर, विद्युत तंदूर, विद्युत केतली तथा विद्युत हीटर जूल के तापन पर आधारित कुछ युक्तियां (उपकरण) है।

2– विद्युत तापन का उपयोग विद्युत बल्ब में प्रकाश उत्पन्न करने में भी होता है, विद्युत बल्ब के निर्माण में टंगस्टन धातु का उपयोग किया जाता है, जिसका गलनांक 3380^0C होता है।

3– विद्युत परिपथों में प्रयुक्त फ्यूज जूल के तापन पर आधारित है यह परिपथों तथा साधित्रो (उपकरण) की सुरक्षा, अनावश्यक रूप से उच्च विद्युत धारा को उनसे प्रवाहित न होने दे कर करता है। फ्यूज को युक्ति के साथ श्रेणीक्रम में संयोजित करते है ।फ्यूज उचित गलनांक वाली मिश्रधातु का बना होता है ।

यदि परिपथ में किसी निश्चित मान से अधिक मान की विद्युत धरा प्रवाहित होती है तो फ्यूज के ताप में वृद्धि होती है। इससे फ्यूज तार पिघल जाता है और परिपथ टूट जाता है। घरेलु परिपथो मे उपयोग होने वाले फ्यूज की अनुमत विद्युत धारा एक एम्पियर से दस ऐम्पियर होती है।

विद्युत शक्ति :– विद्युत परिपथ में धारा प्रवाहित करने पर प्रति सैकण्ड किये गये कार्य को विद्युत शक्ति कहते हैं।

$$P=W/t \qquad (\because V=W/Q \quad \therefore W=VQ)$$

$$P=VQ/t \qquad (\because I=Q/t)$$

$$P=VI$$

उपर्युक्त समीकरण में ओम का नियम प्रयुक्त करने पर –

$$V=IR \quad \text{या} \quad I=V/R$$

$$P=IRxI \qquad P=VxV/R$$

$$P=I^2R \qquad P=V^2/R$$

विद्युत शक्ति का SI मात्रक वाट है।

1वाट शक्ति :– यदि किसी युक्ति में एक एम्पियर धारा प्रवाहित करने पर उसमें एक वोल्ट का विभवान्तर उत्पन्न होता है तो उस युक्ति की शक्ति 1 वाट होगी।

अर्थात : 1वाट = 1वोल्ट X 1ऐम्पियर

वाट शक्ति का छोटा मात्रक है,अतः इसके बडे मात्रक किलोवाट का उपयोग करते है।

1 किलोवाट = 1000 वाट

विद्युत ऊर्जा शक्ति तथा समय का गुणनफल होती है।इसलिये विद्युत ऊर्जा का मात्रक वाट घन्टा है।

जब एक वाट शक्ति का उपयोग 1 घन्टे तक होता है तो उपर्युक्त ऊर्जा एक वाट घन्टा होती है। विद्युत उर्जा का व्यापारिक मात्रक किलोवाट घन्टा है जिसे सामान्य बोलचाल में यूनिट कहते है।

1 किलोवाट = 1000X60 वाट मिनिट

1 किलोवाट = 1000X60X60 वाट सेकण्ड

1 किलोवाट = $36X10^5$ वाट सेकण्ड

1 यूनिट = 1 किलोवाट = $3.6X10^6$ जूल

अमीटर वोल्टमीटर में अन्तर

अमीटर	वोल्ट मीटर
1.अमीटर को विद्युत परिपथ मे श्रेणीक्रम में संयोजित किया जाता है।	1.वोल्टमीटर को विद्युत परिपथ में प्रतिरोधक के पार्श्वक्रम मे संयोजित किया जाता है।
2.यह परिपथ मे धारा का मापन करता है	2.यह परिपथ में प्रतिरोधक के दो बिन्दुओं के मध्य विभवान्तर का मापन करता है।
3.आदर्श अमीटर का प्रतिरोध शून्य होता है।	3.आदर्श वोल्टमीटर का प्रतिरोध अनन्त होता है।

महत्वपूर्ण राशियां, उनके मात्रक, प्रतीक व अन्य विशेषताऐ–

राशि	मात्रक	राशि का प्रतीक	अन्य
1.विद्युत धारा	ऐम्पियर	I	इसका मापन अमीटर द्वारा किया जाता है।
2.विद्युत विभव / विभवान्तर	वोल्ट	V	इसका मापन वोल्टमीटर द्वारा किया जाता है।
3.प्रतिरोध	ओम	R	–
4.विशिष्ट प्रतिरोध / प्रतिरोधकता	ओम मीटर	ρ	–
5.विद्युत शक्ति	वाट	P	–
6.श्रेणीक्रम संयोजन मे तुल्य प्रतिरोध	–	–	$R_s=R_1+R_2+R_3+...$
7.पार्श्वक्रम संयोजन मे तुल्य प्रतिरोध	–	–	$R_p=1/R_1+1/R_2+1/R_3+..$

अध्याय–13

विद्युत धारा के चुम्बकीय प्रभाव

विद्युत धारा का चुम्बकीय प्रभाव :–

1 किसी धातु के तार में धारा प्रवाहित करने पर वह चुंबक की भाँति व्यवहार करता है। इसे विद्युत धारा का चुम्बकीय प्रभाव कहते है।

2 इसकी सर्वप्रथम जानकारी ऑर्स्टेड द्वारा दी गयी।

3 चुम्कीय क्षेत्र की तीव्रता का मात्रक – ऑर्स्टेड

चुम्बकीय क्षेत्र : किसी चुबंक के चारो और का वह क्षेत्र जिसमें उसक बल का संसूचन अर्थात पता लगाया जा सकता है,उस चुंबक का चुंबकीय क्षेत्र कहलाता है। यह एक सदिश राशि होती है अर्थात इसका परिमाण व दिशा,दोनों होती है।

चुम्बकीय क्षेत्र रेखाएॅ : किसी चुम्बक के चारो तरफ उसके चुम्बकीय क्षेत्र को प्रदर्शित करने वाली रेखाएॅ, चुम्बकीय क्षेत्र रेखाएँ कहलाती है।

चुम्बकीय क्षेत्र रेखाओं के गुणधर्म :

1 किसी छड चुम्बक में चुंबकीय क्षेत्र रेखाएँ चुम्बक के उत्तर ध्रुव से प्रकट होती है तथा दक्षिण ध्रुव पर विलीन हो जाती है।

2 चुंबक के भीतर चुंबकीय क्षेत्र रेखाओं की दिशा उसके दक्षिण ध्रुव से उत्तर ध्रुव की ओर होती है। अर्थात चुम्बकीय क्षेत्र रेखाएॅ एक बंद वक्र होती है।

3 चुंबकीय क्षेत्र की आपेक्षिक प्रबलता को क्षैत्र की रेखाओं की निकटता की कोटि द्वारा दर्शाया जाता है। जहाँ पर चुम्बकीय क्षेत्र की रेखाएँ अपेक्षाकृत अधिक निकट होती है वहाँ चुम्बकीय क्षेत्र अधिक प्रबल होता है।

4 दो चुम्बकीय क्षेत्र रेखाएँ कही भी एक दूसरे को प्रतिच्छेद नहीं करती है।

छड चुम्बक के गुण :

1 छड चुम्बक के दोनो सिरे लगभग उत्तर और दक्षिण दिशा की ओर संकेत करता है।

2 छड चुम्बक का वह सिराजो उत्तर दिशा की ओर संकेत करता है उत्तर ध्रुव कहलाता है, जो दक्षिण दिशा की ओर संकेत करता है, दक्षिण ध्रुव कहलाता है।

3 चुबंको के सजातीय ध्रुवों में परस्पर प्रतिकर्षण तथा विजातीय ध्रुवों में परस्पर आकर्षण होता है।

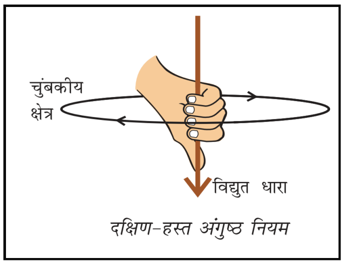

दक्षिण हस्त अंगुष्ठ नियम : किसी विद्युत धारावाही चालक से संबद्व चुम्बकीय क्षेत्र की दिशा ज्ञात करने के लिये विद्युत धारावाही चालक को इस प्रकार पकडे की अंगुठा विद्युत धारा की दिशा की ओर संकेत करता है तो मुडी हुई अंगुलियॉ चालक के चारो ओर चुम्बकीय क्षेत्र की क्षेत्र रेखाओं को व्यक्त करती है।इसे दक्षिण हस्त अंगुष्ठ नियम अथवा मैक्सवेल का कॉर्क स्क्रु नियम भी कहते है।

परिनालिका में प्रवाहित विद्युत धारा के कारण चुम्बकीय क्षेत्रः पास–पास लिपटे विद्युतरोधी ताँबे के तार की बेलन की आकृति की अनेक फेरो वाली कुंडली को परिनालिका कहते है। परिनालिका का एक सिरा उत्तर ध्रुव तथा दूसरा सिरा दक्षिण ध्रुव की भॉति व्यवहार करता है। परिनालिका के भीतर चुंबकीय क्षेत्र रेखाएॅ सरल रेखाओं की भाँति होती है।

परिनालिका के भीतर उत्पन्न चुबंकीय क्षेत्र का उपयोग किसी चुंबकीय पदार्थ जैसे नर्म लोहे को परिनालिका के भीतर रखकर चुंबक बनाने में किया जाता है। इस प्रकार बने चुंबक को विद्युत चुंबक कहते है।

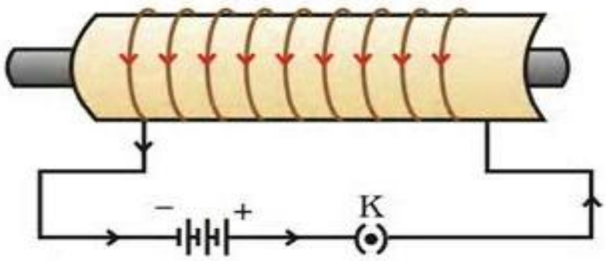

चुंबकीय क्षेत्र में किसी विद्युत धारावाही चालक पर बलः–किसी धारावाही चालक पर आरोपित बल की दिशा विद्युत धारा की दिशा और चुबकीय क्षेत्र की दिशा दोनो पर निर्भर करती है। चालक पर आरोपित बल का परिमाण उस समय उच्चतम होता है जब विद्युत धारा की दिशा चुंबकीय क्षैत्र के लंबवत होती है।

चालक पर आरोपित बल की व्याख्या : फ्लेमिंग के वाम हस्त नियम के द्वारा की जाती है। इस नियम के अनुसार बाएं हाथ की तर्जनी मध्यमा तथा ॲगुठे को इस प्रकार फैलाए की ये तीनो एक दूसरे के परस्पर लम्बवत हो। यदि तर्जनी चुंबकीय क्षेत्र की दिशा और मध्यमा चालक में प्रवाहित विद्युत धारा की दिशा की ओर संकेत करती है तो अँगुठा चालक की गति की दिशा अथवा चालक पर आरोपित बल की दिशा की ओर संकेत करेगा।

विद्युत मोटर : विद्युत मोटर एक ऐसा यंत्र है जो विद्युत उर्जा को यांत्रिक उर्जा में बदल देता है।

1 **सिद्धांत** : जब धारावाही चालक को चुंबकीय क्षेत्र में रखा जाता है तो उस पर एक बल आरोपित होता है। इस बल की मदद से चालक घूर्णन कता है जिससे विद्युत उर्जा यांत्रिक उर्जा में परिवर्तित हो जाती है।

2 **बनावट :** विद्युत मोटर के निम्न भाग है:

(अ) **आर्मेचर** : विद्युत मोटर मे विद्युतरोधी तार के अनेक फेरो वाली एक आयताकार कुण्डली होती है।

(ब) **क्षेत्र चुम्बक** : कुण्डली किसी चुम्बकीय क्षैत्र के दो ध्रुवों N व S के मध्य इस प्रकार रखी होती है कि इसकी दोनो भुजाएँ चुंबकीय क्षैत्र की दिशा के लंबवत रहे।

(स) **दिक् परिवर्तक** : कुण्डली के दोनो सिरे विभक्त वलय के दो अर्द्ध भागों से संयोजित होते है। इन अर्द्धभागों की भीतरी सतह विद्युतरोधी होती है तथा धुरी से जुडी होती है।

(द) **चालक ब्रश :** दिक परिवर्तक के बाहरी चालक सिरे क्रमशः दो स्थिर चालक ब्रश से स्पर्श करते है।

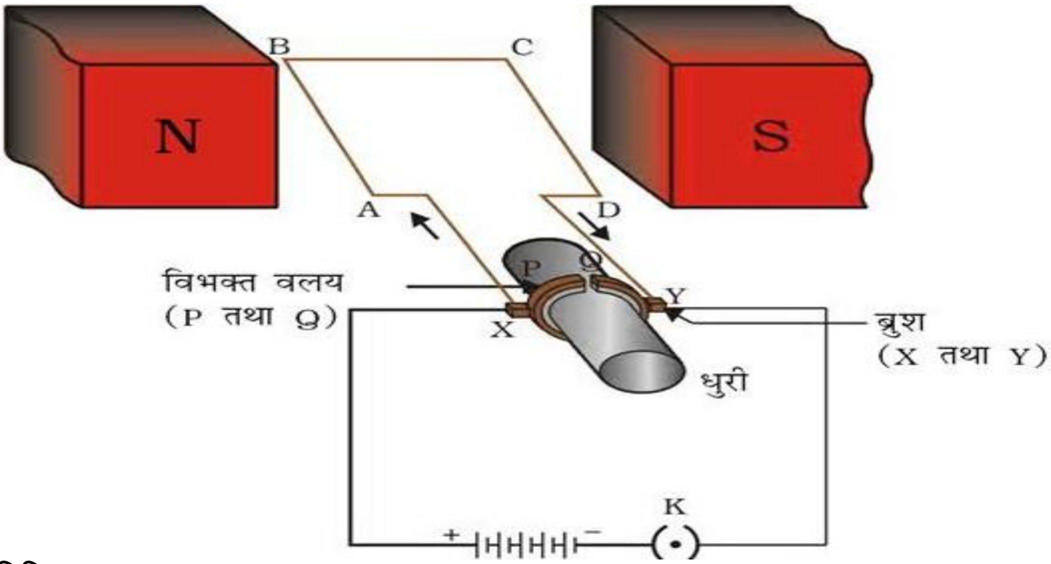

3 **कार्यविधि**

(1) जब आर्मेचर से विद्युत धारा प्रवाहित होती है तो आर्मेचर पर चुबंकीय बल आरोपित होता है। चूंकि आर्मेचर के दोनों सिरों में धारा की दिशा विपरीत होती है। अतः दोनों भुजाओं आरोपित बल बराबर किन्तु विपरित कार्य करता है।

(2) फ्लेमिंग का वामहस्त नियम प्रयुक्त करने पर पाते है कि बाँयी भुजा(AB) नीचे की और तथा दाँयी भुजा (CD) पर ऊपर की ओर बल आरोपित होता है। फलस्वरूप कुंडली वामावर्त घूर्णन करती है।

(3) आधे घूर्णन के पश्चात् कुण्डली की स्थिति उलट हो जाती है । अतः कुण्डली में विद्युत धारा उत्क्रमित होकर प्रवाहित होती है।

(4) वह युक्ति जो परिपथ में विद्युत धारा के प्रवाह को विपरीत कर देता है, उसे दिक परिवर्तक कहते है। उत्क्रमित विद्युत धारा आरोपित बलों की दिशाओं को उत्क्रमित कर देती है। अतः कुण्डली तथा धुरी उसी दिशा में आधा घूर्णन ओर पूरा कर लेती है।

(5) प्रत्येक अर्द्ध घूर्णन के बाद विद्युत धारा का उत्क्रमण होने से कुंडली ओर धूरी निरन्तर एक ही दिशा में घूमते रहते है।

उपयोग : विद्युत मोटर का उपयोग विद्युत पंखो, रेफ्रिजरेटरो, विद्युत मिश्रकों, वाशिंग मशीनों, कम्प्युटरों आदि में किया जाता है।

विद्युत चुम्बकीय प्रेरण :वह प्रक्रम जिसके द्वारा किसी चालक के परिवर्ती चुंबकीय क्षेत्र के कारण अन्य चालक में विद्युत धारा प्रेरित होती है, वैद्युत चुंबकीय प्रेरण कहलाता है।

प्रेरित विद्युत धारा : विद्युत चुंबकीय प्रेरण के कारण उत्पन्न धारा को प्रेरित विद्युत धारा कहते है।

फ्लेमिंग का दक्षिण हस्त नियम : विद्युत चंबकीय प्रेरण की घटना में कुंडली में प्रवाहित विद्युत धारा की दिशा को फ्लेमिंग के दक्षिण हस्त नियम से ज्ञात कर सकते है। इस नियम के अनुसार दाए हाथ की तर्जनी, मध्यमा तथा अंगुठे को इस प्रकार फैलाए कि ये तीनो एक दूसरे के परस्पर लम्बवत हो। यदि तर्जनी चुंबकीय क्षेत्र कि दिशा की ओर संकेत करती है तथा अँगुठा चालक की गति की दिशा की और संकेत करता है तो मध्यमा
चालक में प्रेरित विद्युत धारा की दिशा दर्शाती है।

विद्युत जनित्र : चह युक्ति जो यांत्रिक ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करने का कार्य करती है विद्युत जनित्र कहलाती है।

1 **सिद्वांत** : विद्युत जनित्र विद्युत चुंबकीय प्रेरण के सिद्वांत पर कार्य करता है।

2 **बनावट** : विद्युत जनित्र के निम्न भाग है:

(अ) **आर्मेचर** : विद्युत जनित्र में एक आयताकार कुंडली ABCD होती है । चुंबकीय क्षैत्र के भीतर स्थितकुण्डली को घूर्णन गति देने के लिए इसकी घूरी को यांत्रिक रूप से बाहर से घुमाया जाता है।

(ब) **क्षैत्र चुम्बक** : कुण्डली को स्थायी चुंबक के दो ध्रुवों के मध्य रखा जाता है।

(स) **सर्पी वलय** : कुण्डली के सिरे दो सर्पिवलयों R1 व R2 से संयोजित होते है। तथा दोनो वलय भीतर से धूरी से जूडे होते है।

(द) **चालक ब्रश** : दो स्थिर चालक ब्रश B1 व B2 पृथक–पृथक रूप से क्रमशः वलयों R1 व R2 से स्पर्श किये रहते है। दोनों ब्रुशों के बाहरी सिरे बाहरी परिपथ में विद्युत धारा के प्रभाव को दर्शाने केलिये गेल्वेनोमीटर से संयोजित होते है।

कार्यविधि :

1 चुंबकीय क्षेत्र में स्थित कुंडली को घुर्णन गति देने के लिये इसकी घूरी को बाहर से यांत्रिक रूप से घुमाया जाता है । जब कुण्डली वामावर्त घुमना आरम्भ करती है तो AB भुजा नीचे तथा CD भुजा ऊपर की ओर चुंबकीय क्षैत्र रेखाओं को काटती हुई जाती है।

2 **फ्लेमिंग के दक्षिण हस्त नियम** के अनुसार इन AB व CD दिशाओं के अनुदिश प्रेरित विद्युत धारा प्रवाहित होती है। अतः बाहय परिपथ में B2 से B1 की ओर विद्युत धारा प्रवाहित होती है।

3 अर्द्धघूर्णन के पश्चात् AB भुजा ऊपर तथा CD भुजा नीच की ओर घुमना शुरू करती है। परिणामस्परूप, प्रेरित विद्युत धारा ब्रुश B1 से B2 की ओर बहती है।

4 प्रत्येक आधे घूर्णन के पश्चात् क्रमिक रूप से इन भुजाओं में विद्युत धारा की दिशा परिवर्तित होती रहती है। ऐसी विद्युत धारा जो समान समय अन्तरालों के पश्चात् अपनी दिशा में परिवर्तन कर लेती है उसे प्रत्यावर्ती धारा कहते है। विद्युत उत्पन्न करने की इस युक्ति को प्रत्यावर्ती विद्युत धारा जनित्र कहते है।

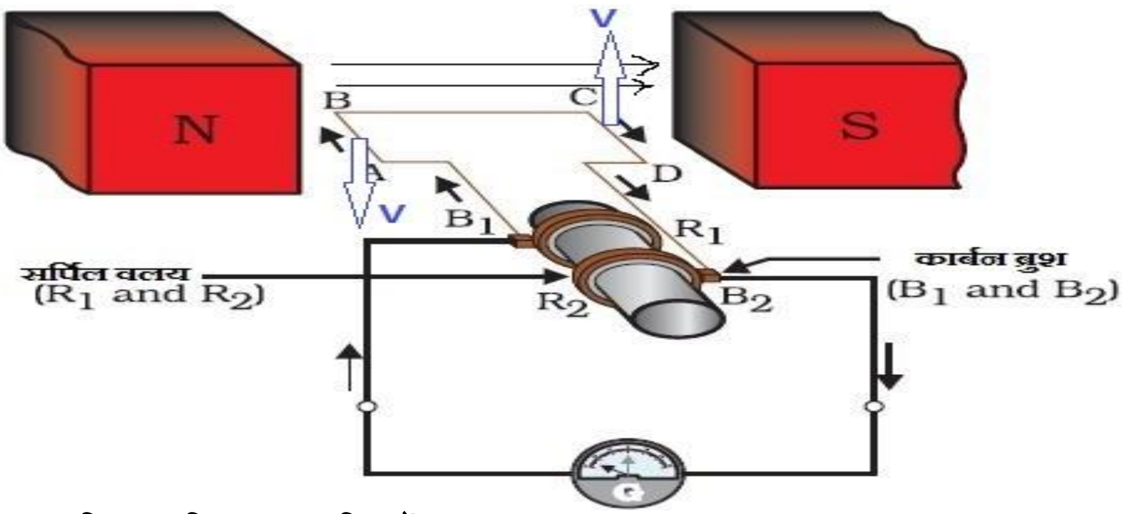

प्रत्यावर्ती धारा जनित्र व दिष्ट धारा जनित्र में अन्तर

प्रत्यावर्ती धारा जनित्र	दिष्ट धारा जनित्र
1 प्रत्यावर्ती विद्युत धारा प्राप्त होती है।	1 दिष्ट धारा प्राप्त होती है।
2 इसमें दो सर्पीवलय होते है।	2 इसमें सर्पी वलय के स्थान पर दिक परिवर्तक होते है।

प्रत्यावर्ती धारा व दिष्ट धारा में अन्तर

प्रत्यावर्ती धारा	दिष्ट धारा
1 यह निश्चित समय अन्तराल के पश्चात् अपनी दिशा उत्क्रमित करती रहती है।	1 यह सदैव एक ही दिशा में प्रवाहित होती है
2 प्रत्यावर्ती धारा की सहायता से सूदूर स्थानों तक विद्युत शक्ति पहुचॉने में कम ऊर्जा क्षय होता है।	3.दिष्ट धारा की सहायता से सूदूर स्थानों तक विद्युत शक्ति पहुचाने में अधिक ऊर्जा क्षय होता है।
3 भारत मे 50 हर्ट्ज आवृत्ती की प्रत्यावर्ती धारा का उपयोग होता है।	

विद्युत जनित्र व विद्युत मोटर में अन्तर

विद्युत जनित्र	विद्युत मोटर
1 यह युक्ति यांत्रिक उर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित करती है।	1 यह युक्ति विद्युत ऊर्जा को यांत्रिक उर्जा में परिवर्तित करती है।
2 इसमें बाहय परिपथ में लोड संयोजित होता है।	2 इसमें बाहय परिपथ में बेटरी संयोजित रहती है।
3 यह विद्युत चुंबकीय प्रेरण के सिद्धांत पर आधारित है।	3 इसमें चुंबकीय क्षैत्र में धारावाही चालक पर बल लगता है। यही विद्युत मोटर की कार्यप्रणाली का सिद्धांत है।

घरेलू विद्युत परिपथ : विद्युत परिपथ में सामान्यतः उपयोग होने वाले दो सुरक्षा उपाय निम्न है।

1 **विद्युत फ्युज** : इसका उपयोग विद्युत परिपथ में अवांछनीय उच्च विद्युत धारा के प्रवाह को समाप्त करके संभावित क्षति से बचाने के लिये किया जाता है। इसे परिपथ में श्रेणी क्रम में संयोजित करते है। यह उचित गलनांक वाली धातु अथवा मिश्रित धातु का बना होता है। यदि परिपथ में निश्चित् मान से अधिक मान की विद्युत

धारा प्रवाहित होती है तो फ्युज के ताप में वृद्वि होती है इसमें फ्युज तार पिघल जाता है और परिपथ टूट जाता है।

2 **भू–सम्पर्क तार** : इसका उपयोग विशेषकर धातु के आवरण वाले विद्युत उपकरणों में किया जाता है धातु के आवरण से संयोजित भू–सम्पक्र तार विद्युत धारा के लिये अल्प प्रतिरोध का चालन पथ प्रस्तुत करता है यदि उपकरण के धात्विक आवरण में धारा का क्षरण होता है तो उपकरण का विभव भूमि के विभव के बराबर हो जाता है। फलस्परूप इस उपकरण को उपयोग करने वाला व्यक्ति तीव्र विद्युत आघात से सुरक्षित रहता है।

घरों में विद्युत उपकरणों का संयोजन :

घरेलू विद्युत परिपथ में सभी उपकरणों को परस्पर पार्श्व क्रम में संयोजित किया जाता है। इसके निम्न लाभ है–

1 सभी साधनों को समान वोल्टता प्राप्त होती है।

2 पार्श्व क्रम संयोजन से तुल्य प्रतिरोध का मान कम हो जाता है। जिस कारण धारा का मान बढ जाता है। इससे प्रत्येक उपकरण में इच्छा अनुसार विद्युत धारा प्रवाहित करायी जा सकती है।

3 परिपथ के एक अवयव का स्वीच बन्द कर दिया जावे अथवा उस उपकरण में कोई खराबी आ जाये तो अन्य परिपथों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पडता है।

अतिभारण :– जब विद्युन्मय तार तथा उदासीन तारों का विद्युत रोधन क्षतिग्रस्त हो जाता है अथवा उपकरणों में कोई दोष होता है तो विद्युन्मय तार तथा उदासीन तार दोनों सीधे सम्पर्क में आते है। ऐसी स्थिति में तार से अधिक धारा प्रवाहित होने लगती है। इसे अतिभारण कहते है। अतिभारण का एक अन्य कारण आपूर्ति वोल्टता में होने वाली वृद्वि तथा एक सोकेट में बहुत से विद्युत उपकरणों को संयोजित करना भी है।

लघुपथन :–अतिभारण की स्थिति में विद्युन्मय तार व उदासीन तार जब सम्पर्क में आते है उस स्थान पर चिन्गारियॉ उत्पन्न होने लगती है। व आग लगने का खतरा रहता है। इसे लघुपथन (शोर्ट सर्किट) कहते है। यह परिपथ में अचानक विद्युत धारा बहुत अधिक हो जाने से होती है।

अध्याय–14

–: ऊर्जा के स्त्रोत :–

1. ऊर्जा के ऊत्तम स्त्रोत के निम्नलिखित गुण होते है–

(i) इकाई द्रव्यमान ऊर्जा स्त्रोत से अधिक मात्रा में कार्य होना चाहिए

(ii) यह आसानी से उपलब्ध होना चाहिए।

(iii) इसका भण्डारण एवं परिवहन भी आसान होना चाहिये।

(iv)यह सस्ता होना चाहिए।

2. ऊर्जा के पारंपरिक स्त्रोत कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस, जल नाभिकीय ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा होते है ।

3.जीवाश्म ईंधन – जीवाश्म ईंधन ऊर्जा कार्बन यौगिको के वे अणु है जिनका निर्माण मूलतः सौर ऊर्जा का उपयोग करते हुए वनस्पतियों ने किया था, जीवाश्मी ईंधन ऊर्जा के अनवीकरणीय स्त्रोत है। इन्हें संरक्षित करने की आवश्यकता है।

उदाहरणः– कोयला, लकड़ी, पेट्रोलियम उत्पाद।

जीवाश्म ईंधन के दहन से विभिन्न हानियाँ

(i) जीवाश्म ईंधन बनने में लाखों वर्ष लगते है और इनके भण्डार सीमित है।

(ii) जीवाश्म ईंधन अवनीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत है।

(iii) जीवाश्म ईंधन जलने से वायु प्रदूषण होता है। कार्बन सल्फर और नाइट्रोजन के के ऑक्साइडों का

जलीय विलयन अम्लीय होता है। अतः जीवाश्म ईंधनों के धुएँ अम्लीय वर्षा के कारक है जो मनुष्य के श्वसन संबंधी तथा शरीर के खुले अंगो में जलन पैदा करते है।

4. **तापीय ऊर्जा संयंत्र** – इन संयंत्रों में जीवाश्म ईंधन का दहन करके जल उबालकर भाप बनाई जाती है। जो टरबाईन को घुमाकर विद्युत उत्पन्न करती है।

5.**जल विद्युत संयंत्र** – इस संयंत्र में जल को ऊँचाई से गिराकर टरबाइन को घुमाया जाता है। जिससे जल की स्थितिज ऊर्जा विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित हो जाती है।

6.**बायो–मास (जैव–मात्रा)**– ऊर्जा के ऐसे स्त्रोत जो जीव–जन्तुओं एवं पौधों से प्राप्त होते है इन्हें जैव–मात्रा कहते है।

7.**बायो गैस (गोबर गैस संयंत्र)** – इस संयंत्र में ईंटों से बनी गुम्बद नुमा संरचना होती है जिसमें एक तरफ से गोबर तथा जल का गाढा घोल (कर्दम) डाला जाता है। अन्दर वाले भाग को सम्पाचित्र कहते है।

यहाँ पर गोबर का वायु की अनुपस्थिति में अपघटन होता है, जिससे गोबर गैस बनती है। इस गैस में 75% मात्रा मैथेन गैस (CH_4) की होती है। इस गैस को गुम्बद के ऊपर लगे पाइप से आवश्यकतानुसार निकाल लिया जाता है। गोबर गैस बनने के बाद शेष रहा अपशिष्ट भी उपयोगी होता है, इसका उपयोग खाद के रुप में किया जा सकता है। गोबर गैस का उपयोग ईंधन के रूप में भोजन बनाने, पानी गरम करने आदि में करते है। यह बिना धुएँ, बिना राख के जलता है अर्थात् यह पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुँचाता है। अतः पर्यावरण हितैषी ऊर्जा स्त्रोत है।

- यह सयंत्र बायोगैस के साथ.साथ फसल उत्पादन के लिए उच्च गुणवता वाला खाद भी हमें देता है। जिसे नीचे दी गयी तालिका में दर्शाया गया है

खाद का प्रकार	**नाइट्रोजन (%)**	**पोटैशियम (%)**	**फ़ास्फ़रोस (%)**
फार्म की खाद (घूरे की खाद)	0.5-1	0.5-0.8	0.5-1
डाइजेस्टर स्लरी (तरल)	1.5-2	1	1
डाइजेस्टर स्लरी (सूखी)	1.3-1.7	0.85	0.85

बायोगैस का सामान्य (Typical) संरचना[1]

यौगिक	**आणविक सूत्र**	**%**
मिथेन	CH_4	50–75
कार्बन डाईआक्साइड	CO_2	25–50

नाइट्रोजन	N_2	0–10
हाइड्रोजन	H_2	0–1
हाइड्रोजन सल्फाइड	H_2S	0–3
आक्सीजन	O_2	0–0

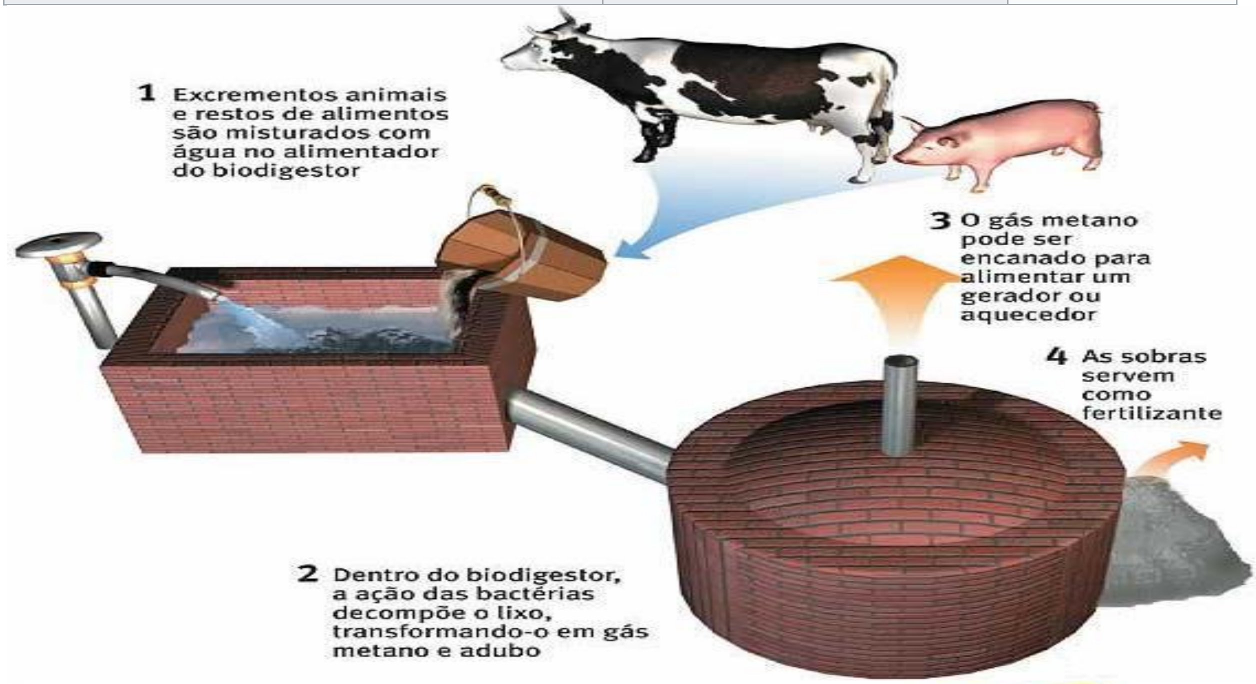

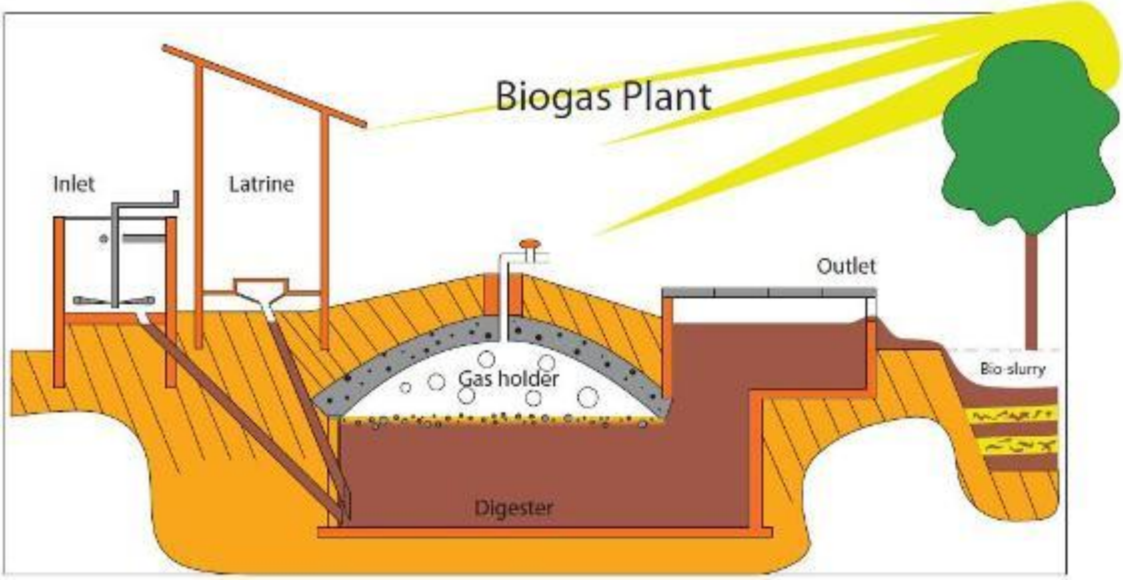

8. **पवन ऊर्जा** – पवन चक्की एक ऐसी युक्ति है जिसमें वायु की गतिज ऊर्जा का उपयोग चक्की के ब्लेडो को घुमाने में किया जाता है। ब्लेडों की संरचना विद्युत पंखो के ब्लेड के समान होती है। केवल अन्तर इतना होता है कि विद्युत पंखे के ब्लेड घूमने पर वायु मिलती है जबकि पवन चक्की में वायु के चलने पर ब्लेड घूमते है। ब्लेडों की घूर्णन गति के कारण पवन चक्की से आटा पीसना, जल पम्प चलाना आदि कार्यकिये जाते है। पवन ऊर्जा नवीकरणीय ऊर्जा का एक पर्यावरण हितैषी एवं दक्ष स्त्रोत है।

—

वैकल्पिक या गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत

तकनीकी विकास के साथ–साथ ऊर्जा की खपत भी बढ़ रही है। हमारी बदलती जीवन शैली अपने आराम के लिए अधिक से अधिक मशीनों के उपयोग के कारण भी ऊर्जा की मांग अधिक हो रही है। यह ऊर्जा की मांग की आपूर्ति परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों से नहीं हो पा रही है। अतः हम ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोतों की ओर आकर्षित हो रहे है।

वैकल्पिक ऊर्जा के स्त्रोत निम्न है :–

- **सौर ऊर्जा –** सूर्य के प्रकाश द्वारा प्राप्त ऊर्जा, सौर ऊर्जा कहलाती है। भारत में वर्ष के अधिकांश दिनों में सौर ऊर्जा प्राप्त होती है।
- **सौर कुकर –** सौर कुकर में एक काला पृष्ठ होता है जो ऊष्मा अवशोषित करके गर्म हो जाता है। इसमें कांच की शीट का ढक्कन होता है जो अधिक प्रकाश को काले पृष्ठ पर फोकसित करता है जिससे इसका ताप और उच्च हो जाता है। इसका उपयोग खाना पकाने में किया जा सकता है।
- **सौर पैनल –**

– सौर पैनल बहुत सारे सौर सैलों को परस्पर संयोजित करके बनाया जाता है।

– सौर पैनल बनाने में चाँदी धातु का उपयोग किया जाता है।

– सौर सैल सौर ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में रूपातंरित करते है।

– एक सौर सेल से 0.5-1.0 V वोल्टता तक तथा 0.7 W विद्युत उत्पन्न होती है।

– सौर सेल बनाने के लिए सिलिकॉन उपधातु का उपयोग किया जाता है।

– सौर सेल तथा सौर पैनल कई कारणों की वजह से व्यापारिक उपयोग व्यावहारिक नहीं है।

समुद्रों से ऊर्जा :–

- **ज्वारीय ऊर्जा –** चन्द्रमा के गुरूत्वीय आकर्षण के कारण पृथ्वी पर स्थित सागरों मे जल का स्तर चढ़ता व गिरता है जिसे ज्वार–भाटा कहते है। ज्वार–भाटा में जल के स्तर के चढ़ने तथा गिरने से हमें ज्वारीय ऊर्जा प्राप्त होती है।
  इस ऊर्जा का दोहन सागर के संकीर्ण क्षेत्र पर बाँध का निर्माण करके किया जाता है। बाँध के द्वार पर स्थापित टरबाइन ज्वारीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित कर देती है।
- **तंरग ऊर्जा –** महासागरों के पृष्ठ पर बहने वाली प्रबल पवनें, तंरगे उत्पन्न करती है। इन तरंगों की गतिज ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।
- **महासागरीय तापीय ऊर्जा –** महासागरों की सतह का जल सूर्य के ताप द्वारा गर्म हो जाता है जबकि गहराई वाले भाग का जल अपेक्षाकृत ठण्डा होता है। ताप में इस अंतर का उपयोग सागरीय तापीय ऊर्जा रूपातंरण विद्युत संयंत्र (OTEC विधुत संयंत्र) में ऊर्जा प्राप्त करने के लिए किया जाता है। OTEC विधुत सयंत्र के प्रचालन के लिए तापांतर कम से कम 20^0C होना चाहिए। इस तरह जल का उपयोग अमोनिया जैसे वाष्पशील द्रवों को उबलने मे किया जाता है। इस प्रकार बनी वाष्प से जनित्र का टरबाइन को घुमाकर विद्युत उत्पन्न की जाती है।
- **भूतापीय ऊर्जा –** भूमि की गहराई में छिपी चट्टानें ऊपरी भागों में आ जाती है तथा एकत्र हो जाती है इन क्षेत्रों को ''तप्त स्थल'' कहते है। जब भूमिगत जल उन तप्त स्थलों के सम्पर्क में आता है तो भाप उत्पन्न होती है। इस भाप को तप्त स्थलों तक पाइप डालकर बाहर निकाल लिया जाता है। अधिक दाब पर निकली इस भाप द्वारा विद्युत जनित्र के टरबाइन को घूमाकर विद्युत उत्पादन करते है।
- **गरम चश्मा (उष्ण स्त्रोत) –** तप्त स्थलों से कभी–कभी गरम जल को पृथ्वी के पृष्ठ से बाहर निकलने के लिए निकास मार्ग मिल जाता है। इन निकास मार्गो को गरम चश्मा अथवा उष्ण स्त्रोत कहते है।
- **नाभिकीय ऊर्जा :–** नाभिकीय ऊर्जा प्राप्त करने की दो विधियां होती है :–
  नाभिकीय विखण्डन– इस प्रक्रिया मे किसी भारी नाभिक वाले परमाणु (यूरेनियम,प्लूटोनियम या थोरियम) पर जब निम्न ऊर्जा वाले न्यूट्रॉन से बमबारी करवायी जाती है तो वह दो हल्के नाभिक वाले

परमाणुओं में टूट जाता है तथा विशाल मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। यह प्रक्रिया निरतंर चलती रहती है। मुक्त ऊर्जा का उपयोग भाप बनाकर विद्युत उत्पन्न करने मे किया जाता है।
नाभिकीय विखण्डन में अल्बर्ट आइस्टीन द्वारा दी गयी समीकरण $E = MC^2$ द्वारा द्रव्यमान, ऊर्जा में रूपान्तरित होता है।

- **नाभिकीय सलंयन–** इस प्रक्रिया मे दो हल्के नाभिकों को जोड़कर एक भारी नाभिक बनाया जाता है। इस प्रक्रिया मे विशाल मात्रा में ऊर्जा निकलती है।
  उदाहरणः– सूर्य की ऊर्जा का स्त्रोत नाभिकीय संलयन अभिक्रिया है। यह अभिक्रिया हाइड्रोजन समस्थानिकों के संलयन द्वारा निम्नानुसार होती है।

  $^{2}_{1}H + ^{2}_{1}H \rightarrow ^{3}_{2}He$ (+n) + ऊर्जा

- **नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत –** ऐसे ऊर्जा स्त्रोत जिनका पुनर्जनन हो सकता है अर्थात् जिनके समाप्त होने की संभावना नहीं होती है नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत कहते है।
  जैसे – सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि।

- **अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत–** ऐसे ऊर्जा स्त्रोत जिनका पुनर्जनन नहीं हो सकता है अर्थात् जिनके भण्डार कभी न कभी समाप्त हो जांएगें, अनवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोत कहते है।
  जैसे– जीवाश्मी ईंधन।

अध्याय–15

–: हमारा पर्यावरण :–

- **पर्यावरण** – हमारे चारों ओर का आवरण जिसमें हम रहते है पर्यावरण कहते है।
- **जैव निम्नीकरणीय** – वे पदार्थ जो जैविक प्रक्रम द्वारा अपघटित होते है।
  उदाहरणः– गोबर, कागज, साग–सब्जी।
- **अजैव निम्नीकरणीय** – वे पदार्थ जो जैविक प्रक्रम द्वारा अपघटित नहीं होते है।
  उदाहरणः– प्लास्टिक,

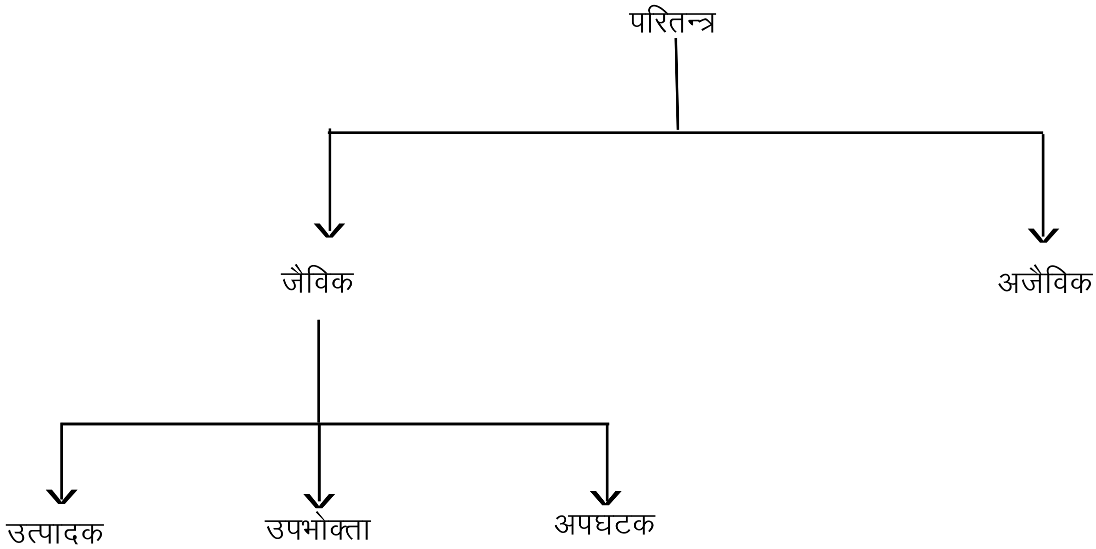

- **उत्पादक** – वे जीव जो अपना भोजन स्वंय बनाते है।
  उदाहरणः– हरे–भरे पौधे।
- **उपभोक्ता** – वे जीव जो अपने भोजन के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादकों पर निर्भर रहते है।

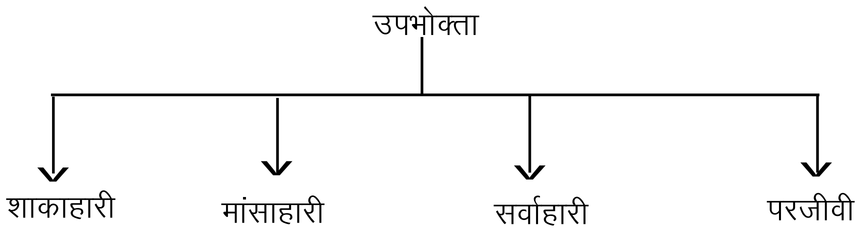

- **उपघटक** – वे जीव जो जटिल कार्बनिक पदार्थ को सरल अकार्बनिक पदार्थ में परिवर्तित करते है।

<u>**आहार श्रृखंला**</u> **:–** प्रकृति में प्रत्येक जीव भोजन के लिये एक–दूसरे पर निर्भर रहते है। जिसके फलस्वरूप एक श्रृंखला का निर्माण होता है। खाद्य श्रृखंला कहते है।

– आहार श्रृखंला का प्रत्येक चरण एक पोषी स्तर बनाता है।

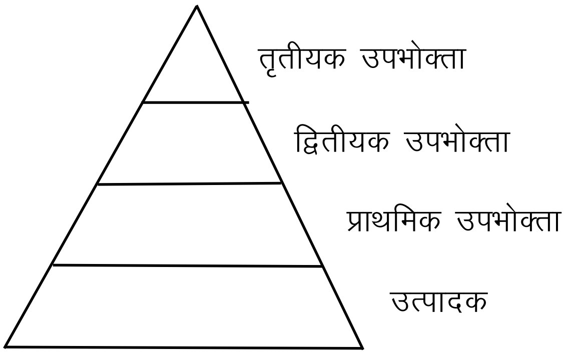

<u>आहार जाल</u> :– प्रकृति में कोई भी खाद्य श्रृंखला एकल नहीं होती है। अनेक खाद्य श्रृखंलाये आपस में जुड़कर एक जाल का निर्माण करती है इस जाल को खाद्य जाल कहते है।

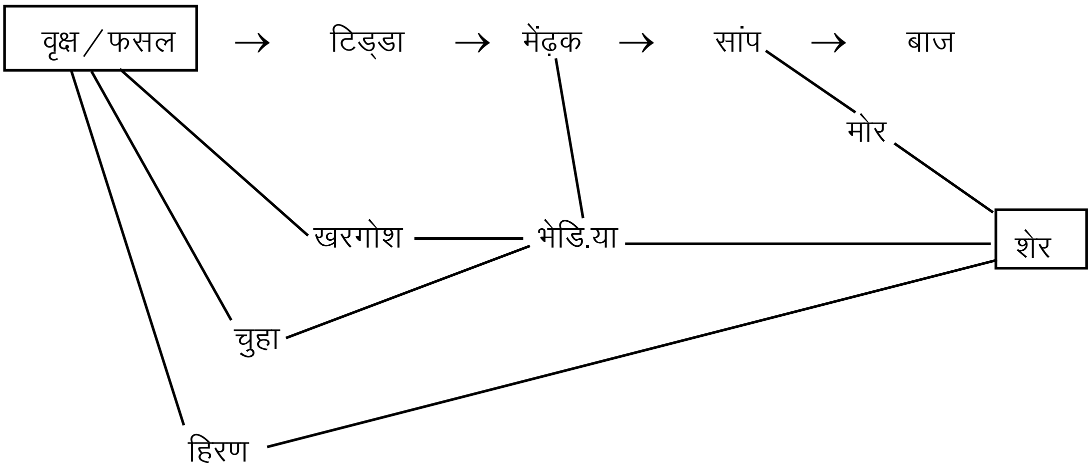

- **ऊर्जा स्थानान्तरण का दस प्रतिशत का नियम –** आहार श्रृखंला के प्रत्येक पोषी स्तर में ऊर्जा का स्थानान्तरण होता है, एक पोषी स्तर से दूसरे पोषी स्तर में जाने पर केवल 10% ऊर्जा का ही स्थानान्तरण होता है। 90% ऊर्जा का क्षय हो जाता है।
- **जैव आवर्धन –** खाद्य श्रृखंला में जीव जब दूसरे जीव को खाता है तो अंत में जाते–जाते खाद्य श्रृखंला के अंतिम सिरे पर उपस्थित जीव के शरीर में हानिकारक रसायनों की मात्रा सबसे अधिक हो जाती है। इस स्थिति को जैव आवर्धन कहते है।
- **ओजोन परत अपक्षय –** वायुमण्डल में ओजोन गैस की मात्रा में कमी होना ओजोन परत अपक्षय कहलाता है। इसके क्षय होने से हानिकारक पराँबंगनी किरणें पृथ्वी तक पहुंचेगी जिससे त्वचा के कैंसर जैसी बीमारियाँ फैल रही है। इसका मुख्य कारक CFC है।
- **कचरा प्रबंधन –** कचरा यदि सही ढंग से नष्ट नहीं किया जाये तो यह पर्यावरण को प्रदूषित कर सकता है, तथा बीमारियों का कारण बन सकता है। अतः कचरे का सही ढंग से निपटारा आवश्यक है। इसके लिये हमें कचरे को आबादी से दूर डालना चाहिए। घर व स्कूल में एक कचरा पात्र रखना चाहिये। गन्दी नालियों का गन्दा पानी तालाब व नदियों में नहीं जाने देना चाहिये।

अध्याय 16 प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्धन

- **प्राकृतिक संसाधन** :– प्रकृति के वे पदार्थ जो मानव के लिए उपयोगी है,प्राकृतिक संसाधन कहलाते है।वन,वन्यजीव,जल,कोयला, एवं पेट्रोलियम इत्यादि।
- **गंगा सफाई** :– यहा योजना 1985 में प्रारम्भ की गई क्योकि गंगा के जल की गुणवत्ता बहुत कम हो गई थी। मानव की आंत में पाये जाने वाले कोलिफोर्म जीवाणु का उपयोग गंगा जल को संदूषित करने में किया जाता है।
- 3R संकल्पना :–
  1. R(Reduce) कम उपयोग :– इसके अनुसार हमें जरुरत के अनुसार ही वस्तुओं का उपयोग करना चाहिए। उदाहरण–आवश्यकता न होने पर पंखे व बल्ब के स्विच बन्द कर देना।
  2. R(Recycle) पुनः चक्रण :– इसके अनुसार प्लास्टिक,कागज,कॉच,धातु की वस्तुए इत्यादि पदार्थो का पुनः चक्रण करके उपयोगी वस्तुएॅ बनानी चाहिए।
  3. R(Reuse) पुनः उपयोग :– इसके अनुसार किसी भी वस्तु का उपयोग बार–बार करना चाहिए। उदाहरण– प्लास्टिक की बोतलों व डिब्बों का रसोई में उपयोग।
- संसाधनो के प्रबन्धन की आवश्यकता :– संसाधन हमारे लिए लम्बे समय तक बने रहे इसके लिए इनके संरक्षण तथा प्रबन्धन की उचित आवश्यकता है। हमें संसाधनों का उपयोग आवश्यकता के अनुसार ही करना चाहिए उन्हे व्यर्थ नष्ट नहीं करना चाहिए।
- इसके विकास के बारे में चिन्तन करना चाहिए।
- नये संसाधनो की खोज के बारे में सोचना चाहिए।
- जैव विविधता क्षैत्र (Hotspots) वे क्षेत्र जहां पर बहुत अधिक संख्या में जीवो की प्रजातियाँ पाई जाती है।
- स्टेक होल्डर (दावेदार) :– हम जहां पर रहते है, हमारे आस–पास जो भी संसाधन मिलते है उनके संरक्षण की जिम्मेदारी हमारी होती है।
- इस प्रकार हमारे आसपास मिलने वाले संसाधनों के उचित रख रखाव के दावेदार(स्टेकहोल्डर) हम स्वयं होते है।
- जीव संरक्षण के प्रयास :–
  1. 1731 में राजस्थान के जोधपुर के पास खेजड़ली गांव में खेजड़ी वृक्षों को बचाने हेतु अमृता देवी विश्नोई ने इस क्षैत्र में अनुठा योगदान दिया। अमृता देवी राष्ट्रीय पुरस्कार वन एवं वन्यजीव संरक्षण के क्षेत्र में प्रतिवर्ष दिया जाता है।
  2. चिपको आदोलन :– यह आन्दोलन हिमालय की उंची पर्वत श्रृखला मे गढवाल के रेनी नामक गांव में एक घटना से 1970 के प्रारम्भिक दशक में हुआ था। यह आन्दोलन स्थानीय निवासियों को वनों से अलग करने की नीति का परिणाम है।

बांध :– बांध में जल संग्रहण पर्याप्त मात्रा में किया जा सकता है। जिसका उपयोग विभिन्न क्षैत्रों में किया जा सकता है। गंगा नदी पर टिहरी बांध। नर्मदा नदी पर बनने वाले बांध की उंचाई बढाने का विरोध निम्न तीन कारणो से हो रहा है।

(अ) सामाजिक समस्या :– बडे बांध बनाने से बडी संख्या में किसान व जनता विस्थापित हो जाती है।
(ब) आर्थिक समस्या :– बडे बांध बनाने में बहुत अधिक पैसा खर्च होता है।
(स) पर्यावरणीय समस्या :– बडे बांध बनाने के लिए बहुत अधिक संख्या में वनों को काटा जाता है। जिससे पेड़ो व वन्य जीवों को नुकसान होता है।

- जल सग्रहण :– इसका मुख्य उद्देश्य भूमि एवं जल के प्राथमिक स्त्रोतो का विकास, द्वितीयक संसाधन पौधो एवं जन्तुओं का उत्पादन इस प्रकार करना जिससे पारिस्थितिक असंतुलन पैदा न हो।
  1. राजस्थान – खादिन, बडे पात्र, नाडी
  2. महाराष्ट्र :– बधांरस, ताल
  3. मध्यप्रदेश एवं उत्तर प्रदेश – बंधिस
  4. बिहार– अहार, पाइन
  5. हिमाचल प्रदेश – कुल्ह (हिमाचल प्रदेश में नहर सिचाई की स्थानीय प्रणाली "कुल्ह" है।)
  6. जम्मू – कॉंदी, तालाब
  7. तमिलनाडु– एरिस
  8. केरल – सुरंगम
  9. कर्नाटक – कट्टा
- चैक डेम :– इसे कंक्रीट एवं छोटे कंकड पत्थरों से बनाया जाता है। इनसे भौम जलस्तर में सुधार होता है।
- कोयला एवं पेट्रोलियम :–
  1. ये जीवाश्म ईधन होते है। जो ऊर्जा के मुख्य स्त्रोत है।
  2. इनका निर्माण लाखों वर्ष पूर्व जीवों की जैव मात्रा के अपघटक से होता है।
- कोयला/पेट्रोलियम दहन से निम्न गैसे CO_2, H_2O, NO_2, SO_2 मुक्त होती है।

नोट :– ग्रीन हाउस प्रभाव मुख्यतया CO_2 गैस के कारण होता है।

सड़क–सुरक्षा

- ड्राइवर को रात्री में मंद प्रकाश पुंज का प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि तेज प्रकाश पुंज के कारण सामने आने वाले वाहन के ड्राइवर की आँखें चौंधिया जाती हैं, जिसके कारण दुर्घटना की संभावना रहती हैं।
- कोहरे में L.E.D. बल्ब व Xenone बल्ब ही काम करते हैं।
- वाहन की हैंड़ लाईट में समान्तर किरण पुंज प्राप्त करने के लिए अवतल दर्पण का प्रयोग किया जाता हैं।
- उत्तल दर्पण किसी वस्तु का छोटा किन्तु विस्तृत प्रतिबिम्ब दिखाते हैं। इसका दृश्य क्षैत्र अधिक होने का कारण इनका उपयोग पश्च दृश्य दर्पण (Back View Mirror) बनाने में होता हैं।
- रात्रि में अथवा घने कोहरे की स्थिति अर्थात कम दृश्यता की स्थिति में कोहरा प्रकाश व डिपर का प्रयोग करना चाहिए ।
- RIAS – प्रत्यक्ष संकेतों के साथ सामान्य रूप से जुड़ी सूचनाओं के स्थानान्तरण के लिए रिमोट इन्फ्रारेड ऑडिबल साइन जैसे अन्य माध्यम का उपयोग किया जाता हैं। यहाँ लिखावट को पढने में असमर्थ लोगों के लिए बोलने वाला संकेत है।
- अत्यधिक कोहरे में वाहन चालक को वाहन की हैड़ लाईट पर पीला सेलोफेन पेपर लगाकर वाहन चलाना चाहिए।
- हेलमेट हमारे शरीर के महत्वपूर्ण भाग मस्तिष्क को दुर्घटना के समय बचाता है।
- स्ट्रीट लाइटों में अवतल दर्पण का उपयोग किया जाता है।
- बैटरी में सीसा व तनु H_2SO_4 का प्रयोग किया जाता है।
  ड्राइविंग के दौरान मोबाईल पर बात करने से चालक का ध्यान दूसरी तरफ चला जाता हैं। जिससे उसका वाहन पर से नियन्त्रण हट जाता है, जिससे दुर्घटना हो सकती है। अतः ड्राइविंग के दौरान मोबाईल के प्रयोग पर कानूनी प्रतिबन्ध हैं।
- मोटर वाहन कानून 1988 के अन्तर्गत धारा 184 में ड्राइविंग करते हुए मोबाईल फोन के प्रयोग पर 6 माह का कारावास व 1000 रुपये के जुर्माने का प्रावधान हैं।
- अगर लम्बे समय तक बैटरी का प्रयोग नहीं लिया जाता हैं तो उसके विद्युत अपघट्य व पानी हाइड्रोजन गैस के रूप में बाहर आ जाते हैं जिससे प्लेटों पर पानी का स्तर कम होने से विद्युत अपघट्य प्लेटों पर जम जाता है तथा बैट्री डिस्चार्ज हो जाती है और यह काम करना बन्द कर देती हैं।
  - आपातकालीन वाहनों के फोन नंबर–

    – स्थानीय पुलिस 100
    – अग्निशमन सेवा 101
    – एम्बुलेंस व अन्य आपात कालीन सेवाओं के लिए 102 व 108

- मोटर वाहन अधिनियम में शराब पीकर वाहन चलाये जाने पर 2000 रूपये का जुर्माना तथा 6 माह का कारावास की सजा का प्रावधान है। इस अपराध को तीन वर्ष के भीतर दोहराने पर कारावास की अवधि 2 वर्ष तथा जुर्माना 3000 रूपये तक बढ़ाया जा सकता हैं।
- सुप्रीम कोर्ट द्वारा प्राप्त निर्देशों के अनुसार–
  (1) कोई भी व्यक्ति दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति को अस्पताल पहुँचा सकता है।
  (2) पुलिस आपसे किसी प्रकार का प्रश्न नहीं करेगी।
  (3) डॉक्टर तुरन्त घायल व्यक्ति का इलाज प्रारम्भ कर उसकी जीवन रक्षा करेगें।
  (4) सुप्रीम कोर्ट द्वारा एक्ट 1989 के तहत दुर्घटना के दौरान किसी की जीवन रक्षा के लिए कोई कानूनी अड़चन नहीं हो सकती है।

एल्कोहोल ; शराब में (उपस्थित)एवं उनके हानिकारक प्रभाव

एल्कोहोल एक अवसादक पदार्थ है, जो मानसिक प्रक्रिया को मंद करता है। एल्कोहोल व्यक्ति की सोच एवं कार्यप्रदर्शन को प्रभावित करता है। यह बौद्धिक क्षमता एवं शारीरिक समन्वय को प्रभावित करता है। एल्कोहोल के सेवन के उपरान्त वाहन चलाने पर चालक की गति एवं दूरी सम्बन्धी निर्णय लेने की क्षमता दुर्बल हो जाती है।

एल्कोहोल से हानियाँ :

(1) शरीर की मानसिक प्रक्रिया मंद हो जाती है।
(2) सोच एवं कार्यक्षमता में कमी।
(3) बौद्धिक क्षमता एवं शारीरिक समन्वय का अभाव
(4) वाहन की गति पर नियन्त्रण नहीं रहता है।
(5) एल्कोहोल के सेवन से दृष्टि बाधित होने के कारण दुर्घटनाओं की सम्भावना अधिक रहती है।
(6) एल्कोहोल के सेवन से संतुलन एवं समन्वय दुर्बल हो जाता है।

दण्ड के प्रावधान :

(1) मोटर वाहन एक्ट के अनुच्छेद 185 के अनुसार एल्कोहोल के प्रयोग करने पर ड्राईवर को रू. 2000 का जुर्माना या 6 माह की सजा का प्रावधान है।
(2) अपराध को तीन वर्ष के भीतर दोहराने पर कारावास की अवधि 2 वर्ष तथा जुर्माना 3000 तक बढ़ाया जा सकता है।

प्रश्न :

(1) एल्कोहोल का सेवन करने के उपरान्त वाहन चलाने पर होने वाली 4 हानियाँ लिखिये।
(2) एल्कोहोल का सेवन से होने वाले 4 दुष्प्रभाव लिखिये।
(3) BAC क्या है?
(4) कानूनन रूप से 100 ml रक्त में कितनी मात्रा से कम की मात्रा निर्धारित है?
(5) मोटर वाहन एक्ट अनुच्छेद 185 क्या है?
(6) एक वाहन चालक को दण्डित करने के उपरान्त दुबारा ऐल्कोहोल का सेवन करने पर दण्ड के क्या प्रावधान है?

औसत छात्र स्तर हेतु केवल प्रश्न 1 एवं 2 ही पर्याप्त है।

नेत्र ज्योति

वाहन चालक के लिए नेत्र ज्योति का अच्छा होना अति आवश्यक है। रात्रि में प्रकाश की तुलना में कम दिखाई देता है। अतः दृष्टि कमजोर होना चालक के लिए हानिकारक होती है।

रात्रि में वाहन चलाते समय विशेष सावधानियाँ :

(1) ड्राईवर की असावधानी या लापरवाही से गाड़ी चलाने पर यदि सामने से वाहन आ जाता है तो दुर्घटना की सम्भावना अधिक रहती है।

(2) रात्रि में वाहन की गति धीमी रखनी चाहिए।

(3) विंड स्क्रीन पर बार–बार ध्यान रखना चाहिए।

(4) रात्रि में Over Take करने में विशेष सावधानी रखें।

(5) कम दिखाई देने की स्थिति में, या कोहरा होने पर लैम्प (Foglams) का प्रयोग करें।

(6) घना कोहरा होने पर पीले रंग के पेपर को हैड लाईट पर सेलो टेप लगाकर सुरक्षित वाहन चलाना चाहिये।

आँखें चेहरे का सबसे संवेदनशील अंग है अतः इसकी सुरक्षा आवश्यक है।

प्रश्न :

(1) रात्रि में वाहन चलाते समय क्या सावधानियाँ रखनी चाहिए।

(2) लैम्प (Floglamps) या डीपर का प्रयोग कब किया जाता है?

(3) घना कोहरा होने पर हैडलाईट पर कौनसे रंग का पेपर लगाना चाहिये?

(4) रात्रि में सुरक्षित ड्राईविंग के लिए किन–किन बातों का ध्यान रखना चाहिये?

सुरक्षित ड्राईविंग हेतु अच्छी नेत्र दृष्टि का महत्त्व

ड्राईविंग क्या है : मस्तिष्क में संग्रहित सूचनाओं के आधार पर संचालित प्रक्रिया है। अतः सुरक्षित ड्राईविंग स्वस्थ जीवन हेतु आवश्यक है। दो पहिया वाहन चलाते समय सदैव हेलमेट का प्रयोग करना चाहिए।

सड़क दुर्घटना में लगने वाली चोटें :

(1) सिर की चोट

(2) रीढ़ की हड्डी की चोट

(3) हड्डी का टूटना

(4) अंगों का कटना/विच्छेद होना

प्रत्येक चालक के पास First Aid Box (प्राथमिक उपचार पेटी) होना अति आवश्यक है प्राथमिक चिकित्सा हेतु First Aid Box अनिवार्य है।

हेलमेट के प्रयोग के लाभः–

1.आँखों में गन्दगी से बचाव

2.कीट पतंगों से बचाव

प्रश्न :

(1) वाहन चलाते समय सड़क दुर्घटना न हो, क्या–क्या सावधानी रखनी चाहिये?

(2) वाहन चालक को सदैव First Aid Box क्यों रखना आवश्यक है?

(3) सड़क दुर्घटना में किस–किस स्थानों पर चोट लग सकती है?

(4) दो पहिया वाहनों को हेलमेट का प्रयोग से होने वाले 2 लाभ लिखिये।

(5) सुप्रीम कोर्ट एक्ट 1989 क्या है?

> **सुप्रीम कोर्ट एक्ट 1989 :** दुर्घटना के दौरान किसी भी जीवन रक्षा के लिए कानूनी अड़चन नहीं है। दुर्घटना का शिकार व्यक्ति की जीवन रक्षा के लिए सुनहरे घण्टे के महत्त्व को समझें।

प्रकाश

दर्पण : (1) समतल दर्पण (2) उत्तल दर्पण (3) अवतल दर्पण

(1) समतल दर्पण : समतल दर्पण से आभासी एवं सीधा प्रतिबिम्ब बनता है।

(2) उत्तल दर्पण : वाहनों के पश्च दृश्य दर्पण के रूप में किया जाता है तथा इसमें ड्राईवर अपने पीछे के वाहनों को देखकर सुरक्षित वाहन चला सकता है।

(3) अवतल दर्पण : टॉर्च, सर्चलाईट तथा वाहनों के अग्रदीपों (Head Light) में प्रकाश का शक्तिशाली किरण पुंज प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

अवतल दर्पणों से समानान्तर प्रकाश पुंज प्राप्त किया जाता है जिससे चालक को दूरस्थ वस्तुओं को देखने में सहायता मिलती है।

स्ट्रीट लाईट में सड़कों को प्रकाश युक्त करने हेतु अवतल दर्पण का प्रयोग करते हैं।

> व्यस्त ट्रेफिक/रात्रि के समय सामने से आता तेज प्रकाश पुंज ड्राईवर की आँखों में चकाचौंध कर देता है अतः ड्राईवरों को व्यस्त ट्रेफिक/रात्रि में कम तीव्रता वाले प्रकाश पुंज का उपयोग करना चाहिए।
>
> **तेज प्रकाश पुंज :** तेज प्रकाश पुंज का प्रयोग राजमार्गों पर करना चाहिए ताकि दूरस्थ वस्तुओं का ड्राईवर अग्रिम ही देख सके।

प्रश्न :

(1) वाहनों की हैडलाईट में कौनसे दर्पण का उपयोग किया जाता है?

(2) समानान्तर प्रकाश पुंज प्राप्त करने के लिए कौनसे दर्पण का उपयोग किया जाता है?

(3) रात्रि में कौनसे प्रकाश पुंज का उपयोग करना चाहिए?

(4) राजमार्गों पर कौनसे प्रकाश पुंज का उपयोग करना चाहिए?

(5) वाहनों में पश्च दृश्य देखने हेतु कौनसे दर्पण का उपयोग किया जाता है?

वाहनों की देखभाल

बैटरी : ऑटोमोबाईल में विद्युत धारा का स्त्रोत बैटरी है। वाहन में बैटरी द्वारा मोटर का स्टार्ट करना, हॉर्न बजाना, बल्ब जलाना आदि कार्य किये जाते हैं। बैटरी में दिष्ट विद्युत धारा (DC) प्रवाहित होती है।

शक्ति (P) = V x I

शक्ति = विभवान्तर x धारा

वाट(W) = वोल्ट(V) x एम्पियर(I)

1 अश्वशक्ति (HP) = 746 वाट